ISSN-2321-3981

विश्व का सर्वाधिक प्रसारित बाल मासिक

देवपुत्र

फाल्गुन २०७५ मार्च २०१९

।। ग्रामकथांक ।।

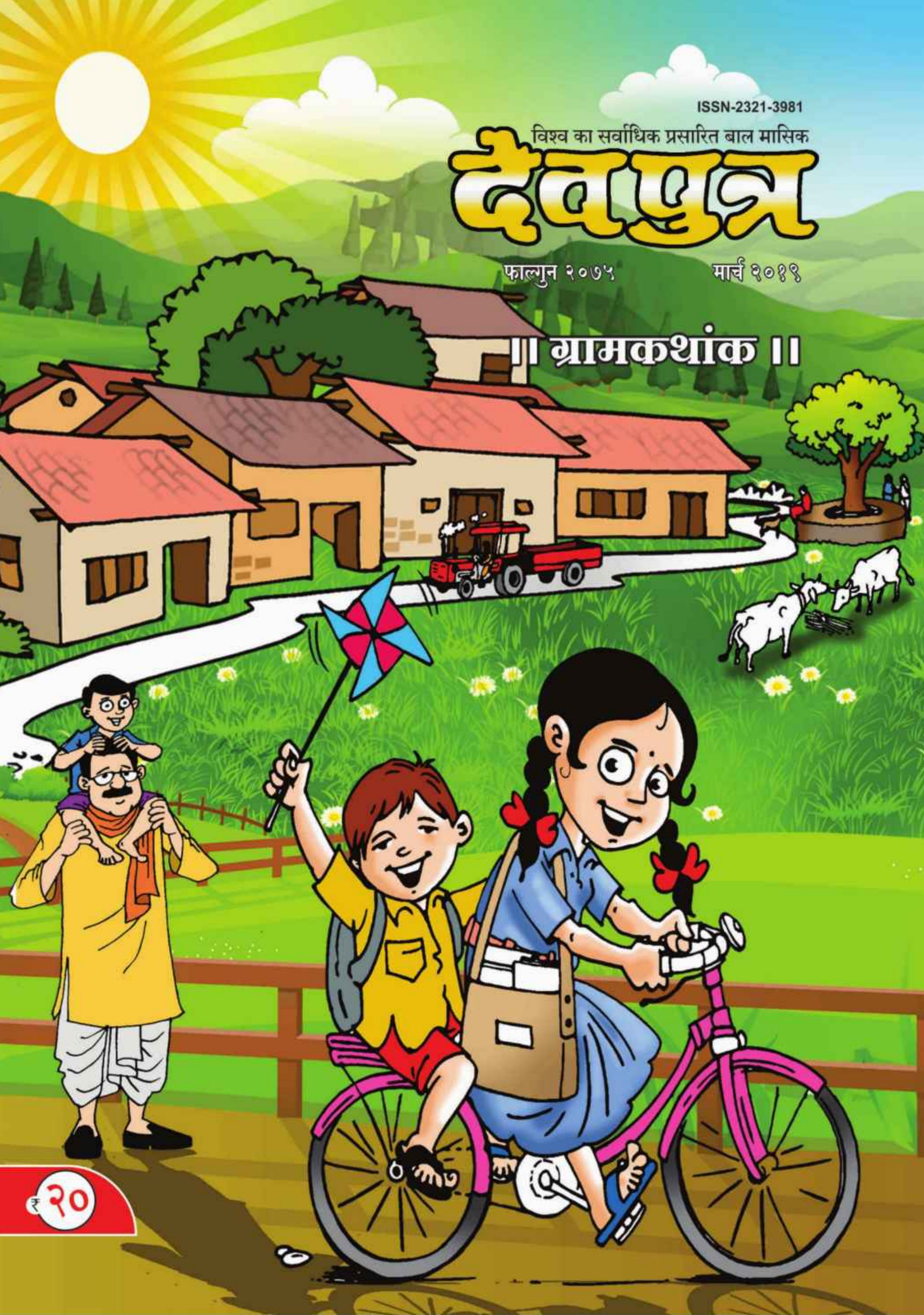

₹२०

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

(विद्या भारती से सम्बद्ध)

फाल्गुन	२०७५	वर्ष ३९
मार्च	२०१९	अंक ९

प्रधान संपादक
कृष्ण कुमार अष्ठाना

प्रबंध संपादक
डॉ. विकास दवे

कार्यकारी संपादक
गोपाल माहेश्वरी

मूल्य

एक अंक	:	२० रुपये
वार्षिक	:	१८० रुपये
त्रैवार्षिक	:	५०० रुपये
पंचवार्षिक	:	७५० रुपये
आजीवन	:	१४०० रुपये
सामूहिक वार्षिक	:	१३० रुपये

(कम से कम १० अंक लेने पर)

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल 'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

संपर्क

४०, संवाद नगर,
इन्दौर ४५२००१ (म. प्र.)
दूरध्वनि: (०७३१) २४००३३९, ४३९
e-mail: devputraindore@gmail.com
editordevputra@gamail.com

सीधे 'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' के खाते में राशि जमा करने हेतु –
खाता संख्या – 53003592502
IFSC-SBIN0030359
आलोक : कृपया केवल 5000 रु. से अधिक की राशि जमा करने हेतु ही कोर बैंकिंग सुविधा का उपयोग करें।

अपनी बात

प्यारे भैया-बहिनो,

'ग्राम कथांक' आपके हाथों में सौंपते हुए बहुत आनंद की अनुभूति हो रही है। वर्षों से हम सब पढ़ते चले आ रहे हैं- "भारत गाँवों में बसता है।" परंतु कभी समझ न पाए कि भारत तो गाँव और शहरों का समुच्चय है फिर ऐसा ही क्यों कहा जाता है? वास्तव में भारत विश्व का ऐसा देश है जहाँ कि बहुसंख्य जनता ग्रामवासी है। यह बात और है कि ये गाँव अब पहले जैसे गाँव नहीं रहे। छोटे गाँव कस्बों में और कस्बे अब शहरों में बदल रहे हैं।

मुझे याद आता है एक बार विज्ञान के कालांश में पढ़ाते हुए एक बच्चे ने मुझसे कहा- "आचार्य जी! पृथ्वी से उपग्रह चन्द्रमा पर गए। एक स्थान पर उतरकर आसपास के चित्र लिए और हमने मान लिया कि चन्द्रमा ऐसा ही है। यदि अन्य ग्रह का कोई यान पृथ्वी पर आए और समुद्र या रेगिस्तान में उतरकर फोटो लें और अपने ग्रह पर जाकर कहे पूरी पृथ्वी ऐसी है तो क्या यह सच होगा?

बात में तर्क तो ठीक था। मुझे लगता है गाँव को लेकर भी हम कुछ-कुछ ऐसी ही मनःस्थिति में रहते हैं। गाँव यानी क्या? तो याद आते हैं- पगडंडी, गाय बैलगाड़ी, गोबर, खेत, फसल, दूध-छाछ वगैरह-वगैरह...।

किन्तु अब गाँव वैसे नहीं रहे बच्चो! मैं यदि आपसे कहूँ- ट्रेक्टर, स्कॉर्पियो, बुलेट, टी.वी., फ्रिज, एसी, कम्प्यूटर प्रतिभाएँ, डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, चार्टर्ड, एकाउण्टेण्ट, उद्योगपति... तो आप कहेंगे असंभव। यह क्या गाँव की बात हो रही है? परंतु आप सब नई पीढ़ी के 'गुगल सेवी' बच्चों से यही कहूँगा एक बार इण्टरनेट पर देखिए। विगत वर्ष में महंगी और बड़ी चार पहिया गाड़ियों की सर्वाधिक बिक्री गाँवों में हुई है। गाँवों से आने वाले IAS और IPS में चयनित होने वाले विद्यार्थी अब २७ प्रतिशत से बढ़कर ५५ प्रतिशत की सांख्यिकी को पार कर रहे हैं। देश के प्रत्येक सेवा क्षेत्र में ग्रामीण पृष्ठभूमि के सेवक लगातार बढ़ रहे हैं। इतना ही नहीं तो अपने-अपने प्रदेशों की विगत ५ वर्षों की प्रावीण्य सूची उठाकर देखिए। प्रथम १० स्थानों पर लगभग ७५ प्रतिशत से ८० प्रतिशत बच्चे सामान्य गाँवों, कस्बों के हैं। पिछले पंचायत चुनावों में भारत की ३५ लाख माता-बहनें, एक साथ राजनीति में आई हैं। विदेशों से MBA और IT प्रोफेशनल होकर अपने गाँव में सरपंच बनने वाली सबसे कम उम्र की छवि राजावत, बरखा श्रीवास्तव और भक्ति शर्मा जैसे अनेक उदाहरण प्रेरणा देते हैं।

आप सब इस 'ग्रामकथांक' को पढ़ें और फिर अपनी कलम उठाकर एक नई ग्रामकथा लिख डालिए। आपकी नए भारत की नई 'ग्रामकथा' कैसी होगी यह तो पढ़ने पर ही पता चलेगा?

आपका
बड़ा भैया

अनुक्रमणिका

ग्रामकथाएँ

- सपनों का गाँव - गोविन्द भारद्वाज ०५
- फिर आऊँगा गाँव - डॉ. देशबन्धु शाहजहाँपुरी ०९
- कबीर वाली नानी - डॉ. लता अग्रवाल १४
- संकल्प - डॉ. सुधा गुप्ता 'अमृता' १७
- गाँव की पूजा - राजा चौरसिया १९
- ईशु मेरा भाई है - डॉ. राजीव गुप्ता २३
- पेड़ों की भरपाई - संतोष श्रीवास्तव 'सम' २६
- गाँव की हवा - गोपाल माहेश्वरी ३०
- नानी का गाँव - नवीन कुमार जैन ३६
- ग्रामवासिनी भारत माता - डॉ. सेवा नन्दवाल ३७
- छपाक छैया ताल... - डॉ. वेदमित्र शुक्ला ४१
- माटी का मोल - पद्मा चौगाँवकर ४५

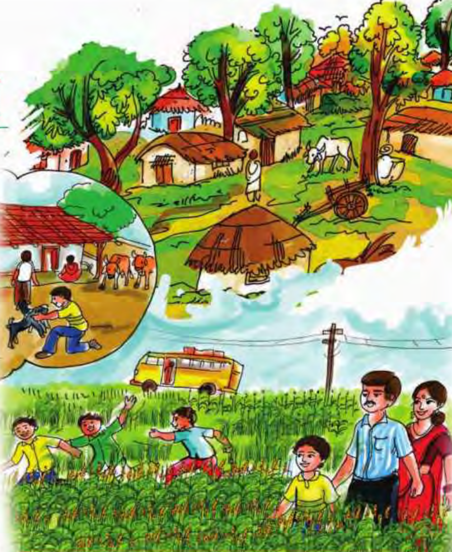

रचनाकारों से निवेदन

सभी बाल रचनाकारों एवं साहित्यकारों से निवेदन है कि यदि आप देवपुत्र में प्रकाशन हेतु अपनी रचना अणुडाक (E-mail) से भेजना चाहते हैं तो कृपया अपनी रचना-

editordevputra@gmail.com पर भेजिए।

अब से devputraindore@gmail.com का उपयोग केवल सदस्यता एवं व्यवस्था कार्यों के लिए किया जाना अपेक्षित है।

क्या आप देवपुत्र का शुल्क नेट बैंकिंग से जमा करा रहे हैं?

तो कृपया ध्यान दें!

देवपुत्र का शुल्क इसकी प्रकाशन संस्था

सरस्वती बाल कल्याण न्यास के खाते में ही जमा कराएँ।

विवरण इस प्रकार है-

खातेदार - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास**

बैंक - **स्टैट बैंक ऑफ इण्डिया, एम.वाय.एच.परिसर शाखा, इन्दौर**

खाता क्रमांक - **53003592502**

IFSC- **SBIN0030359**

राशि जमा करने के बाद जमा पर्ची को देवपुत्र के मेल ID devputraindore@gmail.com पर अवश्य भेजिए।

नेट बैंकिंग में प्रेषक के कॉलम में पहले अपना स्थान लिखें फिर **सरस्वती शिशु मंदिर** का संक्षेप लिखें तो सन्देश ठीक आता है।

उदाहरण के लिए -

सरस्वती शिशु मंदिर, संजीत मार्ग, मंदसौर ने देवपुत्र का शुल्क भेजा तो उन्हें प्रेषक में लिखना चाहिए -

"**मन्दसौर संजीत मार्ग SSM** " आशा है सहयोग प्रदान करेंगे।

सपनों का गाँव

कहानी : गोविन्द भारद्वाज

रोशनी उदास बैठी थी। उसको उदास देखकर मयंक ने लाड़ से पूछा, ''अरी छुटकी! उदास क्यों बैठी है...क्या माँ ने कुछ कह दिया या फिर विद्यालय में शिक्षक ने डांट दिया?'' नहीं भैया!... बस यूं ही...।'' रोशनी ने कहा। वास्तव में मयंक अपनी छोटी बहन रोशनी को छुटकी कह कर बुलाता था। ''अरे बता भी... क्यों उदास है मेरी बहन छुटकी?'' मयंक ने फिर पूछा। रोशनी बोली, ''पिताजी इस बार हमें छुट्टियों में गाँव ले जा रहे हैं।'' ''तो क्या हुआ ये तो बहुत अच्छी बात है... शहर में रहते रहते कितने ऊब से गये हैं।'' इस पर रोशनी ने कहा, ''भैया! मेरी सहेली ने गाँव के बारे में जो कुछ बताया उसे सुनकर मुझे गाँव के नाम से ही नफरत हो गई है।'' ''क्या बताया उस पागल सहेली ने गाँव के बारे में... अरे छुटकी असली भारत तो गाँवों में बसता है। शहर की जिंदगी तो सिर्फ नकली व दिखावटी है। और जो कुछ भी हम हैं ना... वो सब गाँव के कारण ही हैं।'' ''लेकिन वह तो बता रही थी कि गाँव में बहुत गंदगी रहती है, धूल ही धूल, न कहीं ऊँची इमारतें हैं और न ही पक्की सड़कें हैं। कच्चे टेढ़े– मेढ़े रास्ते होते हैं। गोबर कूड़े की बदबू फैली रहती है चारों तरफ। मक्खी मच्छर और न जाने कितने ही कीट– पतंगे हवा में उड़ते रहते हैं।'' रोशनी लगातार बोलती जा रही थी। ''हो

गया या फिर और कुछ कहना बाकी रह गया है गाँव की प्रशंसा में...।'' मयंक ने थोड़ा नाराज होते हुए कहा। ''हाँ बहुत कुछ और बताया था उसने...।'' ''बता जल्दी बता...देखता हूँ उसके सपनों में गाँव कैसा होता है?'' मयंक ने बीच में टोकते हुए कहा। रोशनी ने बताया कि, ''मेरी सहेली कह रही थी कि गाँव में बिजली नहीं आती। लोग हाल-बेहाल रहते हैं। शौचालय की व्यवस्था नहीं है। सभी लोग खुले में शौच जाते हैं।'' मयंक अपनी बहन रोशनी की बातें सुनकर बड़ा बैचेन हुआ। वह मन ही मन बड़बड़ाया कि हमारे गाँव के लिए शहर के लोगों में कैसी गलत धारणा बनी है। उसने रोशनी से हँसते हुए कहा, ''छुटकी गाँवों के बारे में मैं तुम्हें बताता हूँ।'' ''तुम्हें क्या मालूम गाँवों के बारे में?'' मयंक बोला, ''पिछली छुट्टियों में मैं दादाजी व दादीजी के पास गया था और उससे पहले एक बार नानी के पास गया था। वहाँ से वापस लौटने का मन ही नहीं होता था मेरा तो...। मेरे हिन्दी के आचार्य जी ने गाँव के जीवन पर एक निबंध भी लिखवाया था, जिसमें मुझे प्रथम स्थान मिला था।'' रोशनी तपाक से पूछ बैठी, ''ऐसी क्या विशेषताएं हैं गाँवों में?''

मयंक ने कुछ बताने से पहले एक शर्त रखते हुए कहा, ''छुटकी! अगर मेरी बातों से यदि तुझे गाँवों की अच्छाइयाँ पता चलीं तो तुझे पिताजी-माताजी और मेरे साथ गाँव चलना होगा।''

''जरूर भैया... लेकिन बताओ तो सही।'' रोशनी ने मयंक की बात मानते हुए कहा।

मयंक ने कहा, ''देखो गाँव हमारे देश की आत्मा है। इस देश की सभ्यता और संस्कृति की शुरुआत गाँवों से मानी गयी। हमारे गाँव में संस्कारों का जन्म हुआ। यदि गाँव के किसान खेतों में अनाज नहीं उगायेंगे तो भला शहरों के लोग क्या खाएंगे? तुमने किताबों में पढ़ा होगा कि गाँव के प्रत्येक घर में तुलसी का पौधा होता है। ये तुलसी घर आँगन की लक्ष्मी मानी जाती है। इस तरह गाय-बैल का महत्व भी है। अब पहले वाले गाँव नहीं रहे। अब तो सभी गाँवों में सड़कें बन गयी हैं। पक्की गलियाँ हो गई हैं। घर-घर में बिजली पहुँच गयी है और तो और अब तो खेतों में नई-नई तकनीक से फसल तैयार की जा रही है। ''बीच में टोकते हुए रोशनी बोल पड़ी, ''पढ़ाई लिखाई में तो फिर क्यों पिछड़ रहे हैं वहाँ के लोग?'' किसने कह दिया तुम से कि गाँव के बच्चे पिछड़े हुए हैं पढ़ाई में...''

अरे वहाँ के बच्चे तो शहरों के बच्चों से बहुत आगे निकल रहे हैं। अभी देखो देश में जितने भी लोग ऊँचे पदों पर हैं वे सब के सब गाँवों से ही आते हैं। खेलकूद हो या फिर साहित्य-कला सभी में नाम कमा रहे हैं हमारे गांव। तुम को पता है गाँवों के लोग लम्बे-तगड़े क्यों होते हैं? ''रोशनी ने पूछा, ''क्यों होते हैं भैया?'' मयंक ने हंसते हुए कहा, ''पगली वे लोग असली भोजन करते हैं।'' ''असली भोजन...!! क्या हम नकली खाना खाते हैं भैया? ''रोशनी ने तपाक से पूछा। ''हाँ, छुटकी...शहरों के बाजारों में मिलावटी सामान मिलता है। जबकि गाँव में शुद्ध दूध, दही, ताजा छाछ और मक्खन। शुद्ध गेहूँ का आटा और ताजी हरी सब्जियां इतना ही नहीं प्रदूषण मुक्त वातावरण। घने वृक्षों की ठंडी हवा। इस कारण उनका स्वास्थ्य अच्छा होता है। हमारे देश के जितने भी फौजी हैं वे सब प्रायः गाँव से ही आते हैं।'' मयंक ने रोशनी को समझाते हुए कहा।

उनकी इतनी लम्बी बातें सुनकर मयंक की माँ वहाँ आ गई। वे बोली क्या ''चल रहा है तुम दोनों भाई-बहन के बीच खुसर-फुसर...।'' मयंक ने कहा, माँ! अपनी छुटकी गाँव जाने के नाम पर उदास बैठी थी। मैं इसे गाँव के बारे में बता रहा था।'' ''तो क्या कुछ समझी भी हमारी छुटकी या अब भी...।'' माँ ने मुस्कुराते हुए पूछा।

''नहीं माँ! मयंक भैया ने इतने अच्छे ढंग से गाँव के बारे में बताया कि मुझे भी अभी से ही गाँव चलने की इच्छा जगने लगी।'' रोशनी ने कहा।

गर्मी की छुट्टियाँ होते ही रोशनी अपने माँ–पिता और भैया के साथ अपने पैतृक गाँव गयी। गाँव का वातावरण देख उसे लगा कि जो बातें भैया ने बताई थी, वो बिल्कुल ठीक थी। जैसे ही वो अपने घर पहुँचे उसके दादाजी ने उसे लपक कर गोद में उठा लिया और बोले, ''अरे, मेरी पोती छुटकी कितनी बड़ी हो गई!'' गली मोहल्ले के बच्चे भी घर में आ गये। रोशनी ने पूछा, ''अरे, ये लोग क्यों आएं हैं घर में?''

''बेटा! यही तो बड़ी बात है हमारे गाँव में... सब से मिलने यहाँ सब आते हैं।'' दादी अम्मा ने कहा। रोशनी ने कहा, ''अपने शहरों में तो किसी से कोई फालतू का रिश्ता नहीं रखता।'' ''बेटा सब तो तुम्हें दिखाने के लिए गाँव लाये हैं।'' पिताजी ने हँसते हुए जवाब दिया। तभी दादाजी बोले, ''बेटी गाँव के लोग सहज सरल व सादगी पसंद होते हैं। यहाँ जैसा अपनापन व भाईचारा तुम्हारे शहरों में नहीं मिलता।'' दादाजी की बाते सुनकर रोशनी के चेहरे पर खुशी छा गयी।

दूसरे दिन मयंक ने दादा जी से कहा, ''दादाजी! मुझे और छुटकी को अपने खेतों में ले चलो। वहाँ हरे भरे–खेत देखकर छुटकी को और भी आनन्द आएगा।'' ''हाँ...हाँ क्यों नहीं बेटा! खेत ही हम सब के अन्नदाता हैं।'' दादाजी ने मुस्कुराते हुए कहा तो रोशनी बोल उठी, ''दादाजी! अन्नदाता तो किसानों को कहा

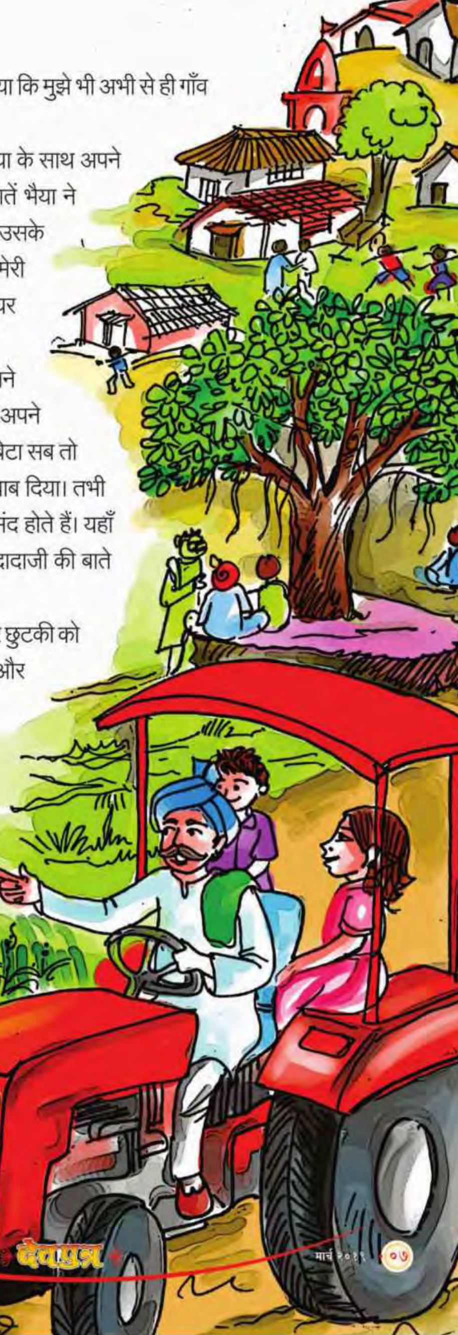

जाता है। मेरी किताब में एक पूरा पाठ ही किसानों पर आधारित है।''

''जरूर होगी बोटी!... लोग हमें अन्नदाता कहते हैं और हम अपने खेतों को अन्नदाता कहते है।'' दादाजी ने समझाते हुए बताया। थोड़ी देर बाद दादाजी ने ट्रेक्टर चालू किया तो दोनों भाई-बहन उस पर सवार हो गये। दादाजी ने दोनों को खेतों में खड़ी फसल के बारे में बताया। रोशनी ने कहा, ''दादाजी! हरे-भरे खेतों को देखकर मन प्रसन्न हो गया। चारों तरफ हरियाली ही हरियाली। शहरों में तो गमलों में बरगद लगाते हैं और यहाँ विशाल बरगद और पीपल। वाह! आनंद आ गया। सचमुच हमारा भारत तो गाँवों में ही बसता है। मयंक भैया ने सही कहा था। पता नहीं क्यों मेरी सहेली ने गाँव के बारे में इतनी उल्टी-सीधी बातें बताई थी। शहर जाकर उसे जरूर समझाऊंगी।'' ''अरे तेरी सहेली के गाँव में कोई होगा नहीं इसलिए उसे क्या पता गाँव की सुविधाओं का।'' मयंक ने हँसते हुए कहा।

छुट्टियों के खत्म होते ही वे शहर आने की तैयारी कर रहे थे। रोशनी अब भी उदास थी। ''छुटकी तुम शहर जाने के नाम से ही उदास हो गई।'' मयंक ने उसे छेड़ते हुए कहा। ''हाँ भैया...अब अपने सपनों के गाँव से जाने का मन नहीं कर रहा। मन करता है कि यहीं पर रहूँ...दादाजी और दादी माँ के साथ।'' रोशनी ने मन की बात कही। उसके पिताजी ने कहा, ''बेटी! चिंता न करो। तुम बड़े होकर डॉक्टर बनकर इसी गाँव में आना।'' ''सच पिताजी...।'' रोशनी ने उछलते हुए कहा।

पिताजी ने उसे गाड़ी में बैठाते हुए कहा, ''बिलकुल सच बेटी... गाँव को तुम जैसे होनहारों की ही आवश्यकता है।''

रोशनी ने दादा-दादी से पैर छू विदा ली धीरे-धीरे गाड़ी आगे बढ़ती जा रही थी पर उसका मन गाँव में ही अटका हुआ था।

- अजमेर (राज.)

देवपुत्र
के स्वामित्व का विवरण
फार्म-४ (नियम-८)

प्रकाशन स्थान	इन्दौर
प्रकाशन अवधि	मासिक
मुद्रक का नाम	कृष्ण कुमार अष्ठाना
(क्या भारत का नागरिक है) (यदि विदेशी है तो मूल देश)	हाँ
पता	४०, संवाद नगर, इन्दौर
प्रकाशक का नाम	कृष्ण कुमार अष्ठाना
(क्या भारत का नागरिक है) (यदि विदेशी है तो मूल देश)	हाँ
पता	४०, संवाद नगर, इन्दौर
उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	सरस्वती बाल कल्याण न्यास

मैं कृष्ण कुमार अष्ठाना एतद् द्वारा घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

(कृष्ण कुमार अष्ठाना)
प्रकाशक के हस्ताक्षर

फिर आऊँगा गाँव

कहानी : डॉ. देशबन्धु 'शाहजहाँपुरी'

विपिन आज बहुत उदास था। कारण यह था कि अगले सप्ताह उसके पिताजी उसे, काका की बेटी की शादी में गाँव ले जा रहे थे। विपिन कभी गाँव नहीं गया था। उसकी दादी भी गाँव में उसके काका के साथ रहती थीं।

पिताजी ने बताया था कि वह भी बचपन में गाँव में ही रहते थे। लेकिन बड़े होने पर ऊँची कक्षा की पढ़ाई के लिए उन्हें शहर आना पड़ा। फिर पढ़ाई के बाद उनको शहर में अच्छी नौकरी मिल गई थी। इसलिए उन्होंने शहर में ही अपना घर बना लिया था।

आज गाँव में काकाजी अपनी बेटी की शादी का निमंत्रण देने आए थे। चूंकि माँ भी पिताजी के साथ जा रही थीं, इसलिए उसे विवशता में सबके साथ गाँव जाना था। छोटे होने के कारण अकेला तो रह नहीं सकता था भला!

शाम को जैसे ही पिताजी घर आए, विपिन ने प्रश्नों की झड़ी लगा दी, ''पिताजी, क्या गाँव में टी.वी. होगा? क्या वहाँ मैं मोबाइल गेम खेल पाऊँगा? क्या वहाँ पर अपनी कालोनी के बगीचे जैसा बगीचा होगा, जहाँ झूले पड़े हों?'' एक साथ इतने सारे प्रश्न सुनकर पिताजी मुस्कुराते हुए बोले, ''वहाँ टी.वी. तो होगा, लेकिन गाँव में बिजली बहुत कम आने के कारण टी.वी. दिनभर नहीं देखी जा सकेगी। इसी कारण मोबाइल की चार्जिंग भी बिजली कम आने के कारण पूरी नहीं हो सकेगी, इसलिए

तुम मोबाइल गेम भी देर तक नहीं खेल पाओगे।''

पिताजी की बात सुनकर ही विपिन का मन उदास हो गया था। जब वहाँ न तो टी.वी. होगा, न ही देर तक मोबाइल खेला जा सकेगा, तो उसका समय कैसे कटेगा? माँ पिताजी तो शादी में व्यस्त हो जायेंगे, लेकिन वह अकेला ऊब जाएगा। पर वह कर भी क्या सकता था? कोई उपाय भी तो नहीं था, जिससे उसे गाँव न जाना पड़े।

धीरे–धीरे गाँव जाने का दिन भी आ गया। सभी लोग सुबह ही तैयार होकर बस स्टेशन पर पहुँच गए। विपिन ने एक दिन पहले ही अपना मोबाइल गेम पूरा चार्ज करके रख लिया। बस में बैठकर सभी लोग गाँव की ओर चल दिए। विपिन बस में खिड़की के पास बैठा था। तेजी से भागते पेड़, पौधे, खेत, मकान आदि उसे बहुत अच्छे लग रहे थे। कुछ देर बाद बस रुकी, तो माँ–पिताजी के साथ वह भी बस से नीचे उतरा। उसने चारों ओर नजरें घुमाकर देखा। चारों और खेत ही खेत नजर आ रहे थे। माँ पिताजी सड़क के किनारे बनी कच्ची सड़क पर पैदल ही चल पड़े।

''काकाजी का घर कितनी दूर है पिताजी? जब उसे खेतों के अलावा कुछ नहीं दिखा, तो उसने जिज्ञासावश पूछा।

''बस थोड़ी ही दूर है। वह सामने वाले खेत की पगडंडी को पार करते ही घर आ जाएगा।'' पिताजी ने कहा।

''यह पगडंडी क्या होती है पिताजी?'' विपिन ने फिर से अपनी आँखें नचाते हुए पिताजी की ओर देखकर पूछा।

''एक पतला सा रास्ता खेतों के बीच में से जाता है, उसे ही पगडंडी कहते हैं।'' पिताजी ने उसके बालों में हाथ फेरते हुए कहा।

तभी विपिन ने देखा कि कुछ बच्चे एक दूसरे के पीछे चलते हुए तेजी से खेतों के बीच में दौड़ रहे हैं। उन्हें देखकर विपिन के चेहरे पर मुसकान फैल गई। उसे उन बच्चों का इस प्रकार दौड़ना बहुत अच्छा लग रहा था। उसका मन भी हुआ कि वह भी उन बच्चों के साथ खेतों में दौड़ लगाए, लेकिन संकोच के मारे कुछ कह नहीं पाया।

कुछ देर चलने के बाद उसे मकान चमकने लगे थे। काकाजी के घर के पास जब विपिन माँ–पिताजी के साथ पहुँचा, तो उसने देखा कि उनका घर तो पूरा कच्चा है। घर के कोने में दोनों गायें बंधी थीं। पास वाले घर में बकरी के बच्चे खेल रहे थे। बकरी के बच्चों को देखकर विपिन बहुत खुश हुआ। उसने पिताजी से पूछा, ''क्या मैं बकरी के बच्चे के साथ खेल सकता हूँ पिताजी?''

''हाँ, हाँ, क्यों नहीं, लेकिन पहले अपने काकाजी से तो मिल लो, फिर खूब खेलना।'' पिताजी ने मुस्कुराकर कहा।

उसने देखा कि दरवाजे की दीवारों पर लाल रंग से बहुत ही सुन्दर फूल पत्तियों की आकृतियाँ बनी हुई थीं। अन्दर जाने पर उसने देखा कि एक महिला आँगन के एक कोने में पड़े गोबर से आँगन को लीप रही थीं। उन्हें देखकर पिताजी ने विपिन से कहा, ''यह तुम्हारी काकीजी हैं। पैर छुओ बेटा!'' पिताजी की बात सुनकर विपिन ने आगे बढ़कर उनके पैर छुए।'' ''जुग जुग जियो बेटा!'' काकी ने अपना हाथ उठाते हुए कहा। फिर काकी आँगन लीपना छोड़कर, उसके लिए खाने के लिए कुछ लेने रसोई में चली गईं। अभी विपिन

इधर–उधर घर को निहार ही रहा था, अचानक एक बच्चा हाथ में गन्ना पकड़े दौड़ता हुआ आया और विपिन को देखने लगा। अभी वह कुछ कहता, इससे पहले ही काकी रसोई से एक हाथ में गिलास और एक हाथ में चने और लैया की थाली लेकर आईं और पास खड़े बच्चे से बोलीं, ''देखो लल्ला! भैया आया है पैर छुओ इसके।'' काकी की बात सुनकर लल्ला ने आगे बढ़कर उसके पैर छुए। यह देखकर विपिन का सीना खुशी से और फूल गया। गाँव का वातावरण ही नहीं, वरन यहाँ का रहन–सहन और आदर–सत्कार उसे बहुत प्रभावित कर रहा था।

आँगन में पड़ी चारपाई पर बैठकर वह और पिताजी काकी के द्वारा दी गई लैया और गिलास भर दूध का स्वाद लेने लगे। जैसे ही उसने दूध का एक घूंट पिया, उसका स्वाद उसे बहुत प्यारा लगा। मोटी मलाई पड़ा, गाढ़ा दूध तो उसने कभी

शहर में पिया ही नहीं था। शहर में तो पानी मिला हुआ पतला दूध ही मिलता था। यह दूध तो उसे अमृत जैसा लग रहा था।

अभी वह लैया चना और दूध का आनंद ले ही रहा था कि खेत पर से दादाजी आ गए। दादाजी को देखकर विपिन ने पिताजी के बिना कहे, हाथ में पकड़ी तश्तरी और गिलास को जमीन पर रखा और आगे बढ़कर दादाजी के पैर छू लिए। पिताजी ने भी दादाजी के पाँव छुए। विपिन को देखकर दादाजी बोले, ''जुग जुग जियो बेटा! बहुत दिनों को बाद देखा है। अब तो बहुत बड़ा हो गया है मेरा बचुआ।''

दादाजी की लाड़ से भरी बात सुनकर विपिन लजा–सा गया। दादाजी भी उसके साथ चारपाई पर बैठते हुए बोले, ''खाओ खाओ, यहाँ गाँव में लैया चना का तो आनंद ही अलग है। यह तुम्हारे शहर में इतना अच्छा नहीं मिलेगा।''

विपिन ने अपना सिर हिलाकर दादा की हाँ में हाँ मिला दी। कुछ क्षण बाद दादा जी बोले, ''...और इतना पौष्टिक दूध भी शहरों में अब कहाँ मिलता है? शहरों में तो गाय का दूध ही दुर्लभ है, और यदि मिल भी जाए तो शुद्ध मिलना मुश्किल है। यहाँ गाँव में तो अपने घर में एक नहीं दो दो गायें हैं। जितना इच्छा हो, दूध पियो।''

लैया चना और मीठा–मीठा, स्वादिष्ट दूध खत्म हो चुका था। तश्तरी और गिलास जमीन पर रखकर वह लल्ला को साथ लेकर गाँव के बच्चों के संग खेतों की पगडंडी पर कुलांचे भरने बाहर चल पड़ा। बच्चों के साथ छुक–छुक गाड़ी बनाकर खेलना उसे बहुत भा रहा था। उसने बच्चों के साथ लट्टू नचाया, आँख मिचौली खेली, साइकिल का पुराना टायर दौड़ाया, नीम के पेड़ पर पड़े झूले पर बैठकर खूब झूला। उसे बच्चों के साथ खेले इन खेलों के आगे मोबाइल गेम और टी.वी. के खेल बिलकुल भी याद नहीं आए। खेलते खेलते शाम हो गई। लल्ला के साथ वह घर वापस आ गया। तभी उसने देखा कि घर के बाहर बने चबूतरे पर बहुत सारे बच्चे इकट्ठे हो रहे हैं। यह देखकर विपिन को बहुत आश्चर्य हुआ। उसने लल्ला से पूछा, ''ये इतने सारे बच्चे यहाँ क्यों इकट्ठे हो रहे हैं?'' अब तो रात होने वाली है?''

'' ये बच्चे रोज मेरी दादी से कहानी सुनने आते हैं। दादी हम सबको रोज कहानी सुनाती हैं।'' लल्ला ने कहा। तभी उसने देखा कि बूढ़ी दादी धीरे–धीरे लकड़ी टेकते हुए घर से बाहर आईं और बच्चों के बीचोंबीच पड़ी चारपाई पर बैठ गईं। विपिन भी लल्ला के साथ उनके पास ही बैठ गया। फिर दादी ने बहुत ही रोचक कहानी सुनाई। जिसे सुनकर विपिन सहित सभी बच्चे हँसते–हँसते लोटपोट हो गए।

विपिन को अब गाँव का वातावरण अपने शहर के मुकाबले बहुत अच्छा लग रहा था। उसका मन हो रहा था कि वह शहर छोड़कर गाँव में ही रहने लगे। शहर के खेल, मोबाइल, टी.वी. इन खेलों के आगे उसे सब बेकार लग रहे थे।

तीन दिन कैसे बीत गए, विपिन को पता ही नहीं चला। इन तीन दिनों में उसने अपना मोबाइल गेम छुआ तक नहीं। काका जी की बिटिया की शादी के बाद जब घर वापस जाने का समय आया, तो विपिन को बहुत बुरा लगा। उसका मन हो रहा था कि काश, पिताजी कुछ दिन और रुक जाते। शहर में, दादी की प्यारी कहानियाँ, गाँव के बच्चों के साथ खेले ढ़ेर सारे खेल, कुछ भी तो नहीं मिलेगा। लेकिन उसे कल विद्यालय भी तो जाना था। बड़े बेमन से, इन तीन दिनों में उसने गाँव में बने अपने सभी मित्रों से विदा ली और यह वादा किया कि इस बार गर्मियों की छुट्टियों में वह पूरे दो महीने गाँव में ही बिताएगा। गाँव भर के बच्चे उसे सड़क के किनारे तक छोड़ने आए। उन्हें भी अपने नए मित्र के बिछड़ने का बहुत दुःख था। बस मैं बैठकर वह बच्चों की भीड़ को, खिड़की से तब तक देखता रहा, जब तक वह उसकी आँखों से ओझल नहीं हो गए।

– शाहजहाँपुर (उ.प्र.)

कबीट वाली नानी

कहानी : डॉ. लता अग्रवाल

''माँ! इस बार हमारे स्काउट गाइड का दल गाँव में जाकर काम करेगा।'' आज विद्यालय से आते ही रानू ने माँ को विद्यालय के हालचाल सुनाते हुए कहा।

''अरे वाह! यह तो बहुत अच्छी बात है, इस बहाने तुम और तुम्हारे सभी मित्र गाँव से परिचित भी हो जाओगे।''

''हाँ! माँ बहुत सुना है हमने गाँवों के बारे में, इस बहाने देख भी लेंगे, बहुत आनन्द आएगा।''

''वैसे कौन से गाँव ले जा रही हैं तुम्हारी दीदी?''

रानू के विद्यालय में सब शिक्षिका को दीदी कहते थे।

''हुम्म...! कोई ला–लू गाँव नाम बताया था दीदी ने।''

''लालू गाँव! यह तो बहुत अच्छी बात बताई तुमने बेटी!''

''मतलब, मैं समझी नहीं माँ!''

''बेटी! अगर तुम वहाँ गई तो मेरा बहुत बड़ा काम हो जायेगा, कई दिनों से बोझ है मन में।''

''कैसा बोझ माँ? आपने कभी कुछ बताया नहीं।''

''क्या बताती बेटी गृहस्थी के चक्कर में भूल ही गई।''

''क्या?''

''मेरी दूर के रिश्ते की मौसी हैं, अकेली हैं, श्यामपुर गाँव में रहती हैं। पिछली बार एक आयोजन में मुझे मिली थीं, बोली अकेली हूँ बेटी! बैठे–बैठे उकता जाती हूँ।'' मैंने कहा, ''मौसी इस आयु में खाओ–पीओ और भगवान के नाम लो।'' ''तो बोलीं, बात तो तूने सही कही। कई दिनों से सोच रही हूँ शहर से रामायण मंगवा लूँ बैठकर पढ़ूँगी। समय भी कट जायेगा पर जाना ही नहीं हुआ। तभी सोचा था मैं उन्हें शहर से रामायण भेजूँगी, मगर अब तक नहीं भेज पाई।''

''माँ! आप तो गाँव का नाम श्यामपुर बता रही हैं हमें तो लालू गाँव जाना है।''

''बेटी! ये श्यामपुर लालू गाँव से तीन मील की दूरी पर ही है। मैं तुम्हारी दीदी से कहूँगी वो तुम्हें जरूर ले जाएँगे। तुम नानी को रामायण दोगी तो देखना वो बहुत खुश होंगी।''

''अच्छी बात है माँ!''

बच्चों का दल तीन दिन के लिए लालू गाँव पहुँचा। दूसरे दिन दीदी रानू को लेकर श्यामपुर पहुँची। बस से उतरते ही दीदी ने रानू से पूछा।

''रानू! क्या पता है तुम्हारी नानी का दिखाओ?''

''प..ता...! पर माँ ने कोई पता नहीं दिया कह रही

थीं किसी से पूछना कोई भी बता देगा।''

''चलो देखते हैं।''

''दीदी जी! यहाँ तो कोई ऑटो या रिक्शा भी नहीं दिख रहा।'' रानू दीदी से कह रहीं थीं कि पास ही चाय की गुमटी पर खड़े एक आदमी ने कहा,

''शहर से हो बेटी...लगता है गाँव पहली बार आई हो?''

''जी!'' रानू ने सकुचाते हुए कहा।

''तभी! चार गली दो नाका, गाँव का मुँह बांका, यहाँ रिक्शा का क्या काम, हा! हा!!'' कहते हुए वह हँस पड़ा।''

''मतलब?''

''मतलब ये बिटिया, हमारा गाँव बहुत छोटा है, हम दिन में दस बार पूरा गाँव इन पैरों से नाप लेते हैं, सो रिक्शा यहाँ क्या करेगा?''

''ओह! अब तुम्हारी नानी को कैसे खोजा जाय रानू? तुम्हारे पास तो उनके मोहल्ले का नाम या कोई पता भी नहीं है।'' दीदी बोले।

''यहाँ कोई मोहल्ला नहीं होता बहन जी! यहाँ तो बस मोड़ होते हैं, बरगद वाला मोड़, आम वाला, नीम, पीपल, अमरूद वाली गली है। इसी से काम भी चल जाता है।

''किसके घर जाना है बहन जी, हमें बताओ हम बताते हैं।'' वह व्यक्ति बोला।

''मेरी नानीजी हैं।''

''कौन नानी बिटिया! कोई तो नाम होगा?''

''आं! हाँ! निर्मला नानी।''

''कहीं कबीट वाली निम्मो ताई की तो बात नहीं कर रही हो बिटिया?''

''माँ....ने तो निर्मला नाम बताया था।'' रानू ने सोचते हुए कहा।

''वही न जिनके पति स्वर्ग सिधार गये, अकेली रहती हैं यहाँ।''

''हाँ! हाँ! वहीं हैं।''

''ऐसा करो बिटिया ऊ सामने नीम का पेड़ देख रही हो न, ऊ हाँ ते दाहिने को मुड़ जाना तनिक आगे जाकर एक जामुन का पेड़ आएगा... ऊहाँ से एक पन्द्रह कदम चल पड़ना कि एक बड़ का पेड़ मिलेगा जिसके नीचे चौपाल लगी होगी।''

''नीम...म का पेड़, वहाँ...से दाहिने फिरी जामुन उफ्! बहुत कन्फ्यूजन है।'' रानू और दीदी अंगुलियों से नक्शा बनाने लगे।

'' काकाजी! कोई साइन बोर्ड नहीं हैं, मतलब कहीं कोई दिशा सूचक मोड़...?, गली नम्बर या मकान पर नाम की प्लेट?''

''बेटी! हम खेती किसानी के लोग हैं पेड़ हमारे अन्नदाता भी हैं, जीवनदाता भी, इनसे ही हमारी पहचान है। देखो, यहाँ सभी मोड़ पर कोई न कोई पेड़ लगा है...वह मोड़ उसी पेड़ के नाम से जाना जाता है। रही बात नाम की पट्टी की तो बेटी गाँव का यही तो आनन्द है कि यहाँ अभी भी लोगों के आँगन बचे हुए हैं और उन आंगन में उनका पीढ़ियों पुराना लगा कोई न कोई पेड़ लहलहा रहा है। शहर में एक लकड़ी की पट्टी पर नाम लिखा जाता है यहाँ तो पूरा का पूरा पेड़ ही है, इससे बढ़कर कोई पहचान या नाम प्लेट हो सकती है भला? यहाँ तो पहचान है अमरूद वाले ताऊजी, जामुन वाली काकी, बैर वाली मौसी, संतरे वाली बुआ बस यही हमारी नामपट्टी होती है। रानू के साथ दीदी के लिए भी ये नई बात थी और उन्हें सच्ची भी लगी। अब तक उन्हें समझ आ गया था कि निर्मला नानी के यहाँ भी निश्चित कबीट का पेड़ हैं इसी से वे कबीट वाली ताई कहाती हैं।

''हाँ! तो मैं कह रहा था कि चौपाल पर पहुँच कर पूछ लेना कबीट वाली ताई का मकान... कोई भी बता देगा।''

''काका! ये चौपाल...?''

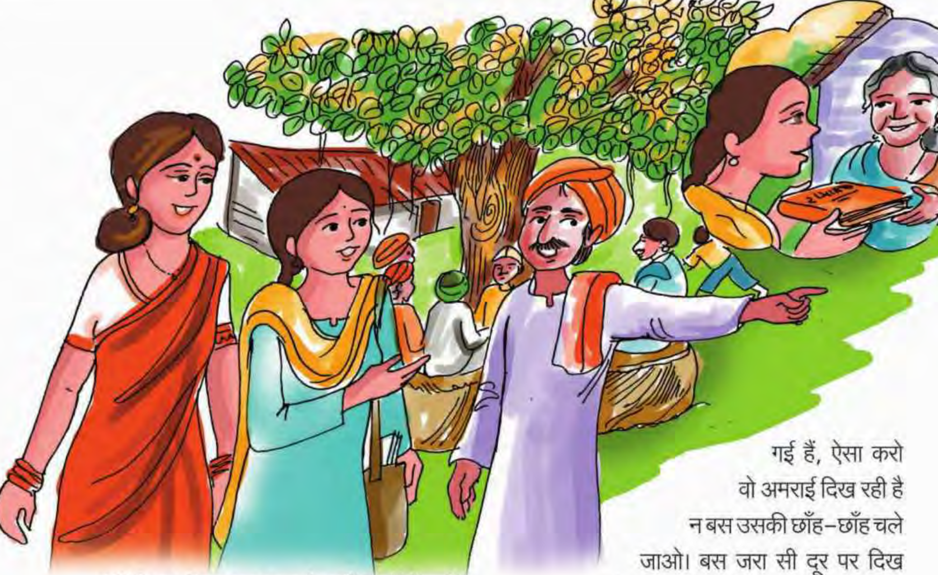

''बिटिया! जिस तरह तुम्हारे यहाँ शहरों में बगीचे होते हैं जहाँ आराम के समय लोग आकर बैठते हैं, बातें करते हैं, बच्चे खेलते हैं, उसी तरह गाँव में भी यह चौपाल होती है। अंतर सिर्फ इतना है तुम्हारे बगीचे चारों तरफ से बंद होते हैं और ये खुली होती हैं।''

रानू और दीदी जब चौपाल पर पहुँचे तो वह दृश्य किसी फिल्म सा लग रहा था। बड़ा सा बरगद का पेड़ जिसके नीचे कई लोग बैठे बतिया रहे थे, आसपास बच्चे खेल रहे थे। कवेलु के टुकड़ों को एक के ऊपर जमाते हुए, दूसरी ओर से गेंद आये तक कर जमा दिया तो चिल्ला पड़े पिट्टू।''

''कितना अच्छा लग रहा है दीदी, सभी बच्चे मिलकर खेल रहे हैं।''

''और एक बात देखी तुमने ये बच्चे बड़ों की निगरानी में भी हैं, कोई डर नहीं। चलो इनसे पूछते हैं तुम्हारी नानी का पता।'' रानू ने नानी का पता पूछा। तो एक साथ कई लोग बोल पड़े।

''अच्छा कबीट वाली ताई! अभी हाल घर की ओर गई हैं, ऐसा करो वो अमराई दिख रही है न बस उसकी छाँह–छाँह चले जाओ। बस जरा सी दूर पर दिख जायेगा कबीट का पेड़, वहीं है निम्मो ताई का घर।''

टीचर जी और रानू जैसे ही घर के आँगन में पहुँचे देखा कबीट से लदा पेड़ मुस्कुरा रहा था।

नानी को पहचान बताकर रानू ने रामायण दी तो नानी ने उसे माथे से लगा ली।

''नयना बिटिया ने तो बहुत अमूल्य भेंट भेजी है, बिटिया बहुत प्यार कहना उसे मेरा।''

''जी नानी जी।'' नानी ने बहुत आवभगत की रानू और दीदी जी की। जब रानू और दीदी लौटने को हुई तो नानी बोलीं, ''तनिक ठहर लाड़ो!'' उन्होंने अंदर से एक बाँस की डलिया में बहुत सारे कबीट देते हुए कहा, ''जाकर अपनी माँ को दियो, मास्टरनी बिटिया तू भी खइयो बड़े मीठे कबीट हैं एक बार खाएगी तो बार–बार नानी को याद करेगी।''

''कबीट वाली नानी हम आपको हमेशा याद करेंगे।'' कहते हुए दीदी और रानू ने नानी से विदा ली।

– भोपाल (म.प्र.)

संकल्प

कहानी : डॉ. सुधा गुप्ता 'अमृता'

सूरज एक मजदूर किसान का बेटा था। वह पढ़ने-लिखने में कुशाग्र बुद्धि था लेकिन उसका मन खेती किसानी में ज्यादा लगता था। पर उसके पिता चाहते थे कि सूरज पढ-लिखकर अच्छी सी सरकारी नौकरी करे, खेती-किसानी न करे।

सूरज हरे भरे खेतों का देखकर आत्मविभोर हो जाता। वह अपने पिता के साथ प्रतिदिन खेत में जाता, हल-बैल चलाने में सहायता करता। खेतों में तरह-तरह के पक्षी आते जिन्हें देखकर वह आनंदित होता। सूरज खेत में मढ़ैया में बैठकर अपनी पढ़ाई भी करता। फसल पकने पर अच्छा बढ़िया बिजूका तैयार कर खेत के बीचो-बीच खड़ा कर देता। धीरे-धीरे सूरज समझदार होने लगा। वह कक्षा छठवीं में पहुँच गया। फसल पककर तैयार हो गई। एक सौ पचास बोरा गेहूँ पैदा हुआ। सूरज और उसके पिता बहुत खुश थे। इस बार भगवान की बहुत कृपा रही। अच्छी वर्षा हुई और समय पर फसल भी बढ़िया तैयार हुई। ओला, पाला, अतिवर्षा से फसल बची रही। किन्तु जैसे ही अनाज के बोरे तैयार हुए, उसका आधा हिस्सा जमींदार ने रख लिया। सूरज का चेहरा उतर गया। वह दुखी होकर रोने लगा।

''मेहनत हमने की और आधा हिस्सा गेहूँ इनने क्यों ले लिया, इन्होंने तो कुछ ना किया।''

पिता ने समझाया- ''बेटा! हमारे पास जमीन नहीं है, जमींदार की जमीन पर खेती इसी शर्त पर करने को मिली थी। ''गरीबी और कर्ज के चलते हमारा धीरे-धीरे सब कुछ बिक गया, हमारे खेत और हल बैल भी।''

सूरज की आँखों से पनारे बह चले पर वह कर ही क्या सकता था। उसने मन ही मन संकल्प लिया कि हम अपने खेत, अपनी जमीन लेकर रहेंगे। यह तो अन्याय है मेहनत हम करें और फल कोई और ले जाय। सूरज ने अपने पिता से कहा- ''मैं पढ़-लिखकर एक अच्छा

किसान बनूँगा। खेती की वैज्ञानिक और उन्नत तकनीक सीखूंगा। सरकार खेती के लिए जमीन और ऋण भी देती है।''

समय गुजरता गया। अभी सूरज ने बारहवीं की परीक्षा ही दी थी। विद्यालय में वह प्रथम श्रेणी में ही नहीं, प्रावीण्य सूची में आया इस कारण उसे उच्च शिक्षा के लिए छात्रवृत्ति भी मिलने लगी। वह सादगीपूर्ण जीवन बिताता और कम से कम खर्च करता। समय आने पर उसका चयन कृषि महाविद्यालय में प्राध्यापक के पद पर हो गया। उसने सबसे पहले अपने संकल्प को पूरा करने का निश्चय किया। सूरज ने एक एकड़ खेती की जमीन खरीदी। उसके पिता की खुशी का ठिकाना न रहा। सूरज और उसके पिता ने अपने खेत की पूजा की और उसकी माटी को माथे से लगा लिया यह कहते हुए कि ''माँ! तुम्हारी जी भरकर सेवा करूँगा।''

सूरज ने सबसे पहले मृदा परीक्षण करवाया। उसके पिता खेती-किसानी के सारे गुण जानते ही थे। सूरज ने ट्रेक्टर खरीदे, उत्तम खाद-बीज खरीदे और खेत पर पिता के रहने की शानदार मढ़ैया भी बनवाई जिसमें वह खुद भी समय-समय पर बैठकर खेती के लिए पिता से परामर्श करते थे।

मानसून आने वाला था। खेत की निंदाई, गुढ़ाई, बुवाई की तैयारी हो गई थी। पानी के लिए खेत के पास ही नहर बहती थी जिससे खेतों की सिंचाई होती थी। इस बार बारिश अच्छी हुई। धान के रोपे तैयार हो गए थे। खेत में कुछ मजदूर काम कर रहे थे। वर्षा के रिमझिम, गाय-बैलों का रंभाना, पंछियों का चहचहाना, नहर की लहर के सरसराने से अति मनभावन संगीत छिड़ गया था। सूरज के पिता ने गीत गाना शुरु किया।

आओ मन भावन बादल काले काले...
खेत पुकारे आ मतवारे हो...

धान रोपते मजदूरों के भी स्वर मुखरित हो गए। सूरज भी ढपली की थाप देता झूम उठा। भला क्यों न झूमता, आज उसका संकल्प जो पूरा हो गया था। समय आने पर फसल पकी। धान की बालियाँ झूमने लगीं। सूरज का मन उत्साह, ऊर्जा भर गया था। यह पूरी फसल उसकी थी। वह स्वयं जमींदार, स्वयं किसान था।

सूरज ने पिता के पैर छूकर प्रणाम किया- यह सब आपके आशीर्वाद से हो पाया है। पिता ने सूरज की पीठ थपथपाई और कहा- ''बेटा! कोई भी अच्छे संकल्प को पूरा करने के लिए प्राणपन से जुटना पड़ता है। आज तुम्हारी मेहनत और लगन से तुम्हारा संकल्प पूरा हुआ है। जीवन में सफल होने के लिए, अपने लक्ष्य को पाने के लिए संकल्प जरूरी है।''

- कटनी (म.प्र.)

गाँव की पूजा

कहानी : राजा चौरसिया

बात पुरानी है। हरे–भरे जंगल के छोर में बरेली नाम का एक छोटा सा गाँव था। शहर से बहुत दूर, वहाँ की आबादी का पेट केवल मौसमी खेती–किसानी से ही जुड़ा हुआ था। लोग अति परिश्रमी थे। चोटी से एड़ी तक पसीना बहाने में महिलाएँ तथा बच्चे भी हाथ जैसा साथ देते थे। अधिकतर ग्रामीण गरीब थे। कुछ घरों का हाल देखकर ऐसा लगता था मानो गरीबी पालथी मार कर बैठ गई है। इसके बाद भी वे निराश नहीं थे। लोग यह कहते हुए मन में धीर धरे रहते थे कि जब घूरे के दिन फिरते हैं तो कभी उनके भी दिन फिर सकते हैं। कच्चे, खपरैल और फूस के घरों में रहकर नून–रोटी खाकर भी चैन की वंशी बजाते थे। दोपहर को पेड़ों की छमछैयाँ में खुरदुरी मेड़ों पर हाथ का तकिया बनाकर गाढ़ी नींद में सो जाते थे।

उस ग्राम बरेली के निवासी पुरानी परम्पराओं को थाती मानकर अपनी छाती से लगाए रखते थे। आवागमन के लिए पगडंडियाँ थी, जिन पर वे नंगे पैर चलते थे। रास्ते बहुत ऊबड़–खाबड़ थे, जहाँ बैलगाड़ियाँ चलती थीं। भरी बरसात में बाहर जाना ठप्प रहता था, फिर भी सुख–दुख साझा करने के अवसरों पर लोग पैदल ही लंबी यात्रा करते थे। रिश्तेदारी निभाने में पत्थर की लकीर जैसे पक्के थे।

प्रकृति की गोद में बसा वह गाँव आत्मीय सहजता को सदैव भजता था। परिस्थितियों के बड़े उतार चढ़ाव के मौके पर जात–पात की बात फुर्र हो जाती थी। भेदभाव की छाया तक नहीं दिख पाती थी। अचानक किसी की मृत्यु होने पर गाँव के किसी भी घर में उस दिन चूल्हा तक नहीं जलता था। घर को धाम मानकर पूज्य वृद्धजन चारधाम की यात्राएँ कम करते थे। बेटियाँ देवियाँ कहलाती थीं। वहाँ गँवई संस्कृति सबसे बड़ी पूँजी थी। भावनात्मक मेल दूध भात जैसा था। आसपास के गाँवों में वह गाँव अलबेला और अकेला था। कुछ घरों में गायें और कुछ घरों में भैंसें थीं। दूध बेचना पाप माना जाता था। प्रायः सभी ग्रामवासियों का भिनसार चिड़ियों की चहकार से होता था।

समय का चक्र हमेशा चलता ही रहता है। कब क्या हो जाए? कोई नहीं जान सकता है। गाँव में एक छोटा किसान प्रेमचंद अपनी पत्नी मुन्नीबाई और बेटी पूजा के साथ सुख से रहता था। उसने बेटी का ब्याह पास के एक गाँव में तय कर तैयारी भी शुरु कर दी थी। वह बरसात के बाद पूजा के हाथ पीले करना चाहता था लेकिन होनी को

भला कौन टाल सकता था?

गरमी के जाते ही वर्षा की आहट मिलने लगी थी। किसान, आसमान की ओर आशाएँ सँजोए निहार रहे थे। आषाढ़ आया तो केवल बूँदाबाँदी ही होती दिखी लेकिन सावन ज्यों ही शुरु हुआ, त्यों ही पानी खूब बरसने लगा। पहली बार इतना मूसलाधार पानी एक सप्ताह तक इतना गिरा कि लगता था जैसे सारे बादल फटने लगे हैं। लोग अपने-अपने घरों में भीगी बिल्ली की तरफ सहमे-सिमटे, हाथ जोड़कर भगवान से चिरौरी कर रहे थे- ''हे इन्द्रदेव! अब तो चले जाओ। हमारी खेती पर तरस खाओ। तुम्हारी दया की हम सब भीख माँग रहे हैं।''

बिजली तो वहाँ थी ही नहीं, इसलिए साँझ से ही अंधेरे का सन्नाटा छा जाता था। दुर्भाग्य से एक दिन आधी रात के बाद प्रेमचंद का पुराना कच्चा मकान खिसकने लगा। और देखते ही देखते भरभरा कर गिर गया। आभास होते ही वह किसी तरह परिवार सहित बाहर निकलकर एक झाड़ के नीचे पहुँच गया। डिब्बी (चिमनी) हवा चलने से बुझ गई थी, इस कारण थोड़ा सामान भी नहीं बटोर पाया था। उसके परिवार का करुण

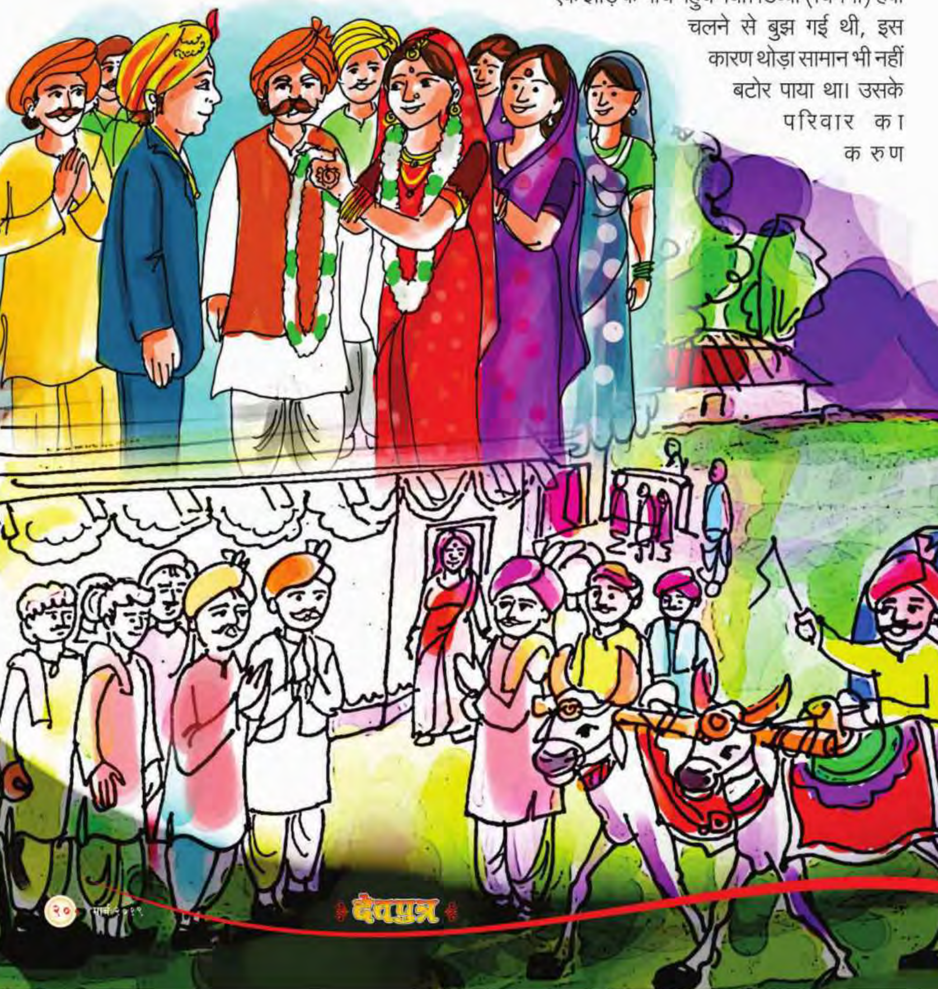

हाहाकार जब पड़ोसियों ने सुना तब वे दौड़कर वहाँ आए। लालटेन के उजाले में लोगों ने देखा कि वे तीन प्राणी पानी से भीगकर कुछ काँप रहे हैं। बरसात थम जाने पर भीड़ उमड़ने लगी थी। सबने भरपूर मदद करने की बात से सहानुभूति जताई। इतने में उदार और समझदार चिरौंजीलाल दादा लाठी टेकते हुए आ गए। उस समय सवेरा होने लगा था। प्रेमचंद के आँसू अपने गमछों से पोंछते हुए उन्होंने कहा– ''बेटा! तुम चिंता मत करो, मैं अभी जिंदा हूँ और गाँव के लोग तुम्हारा साथ देंगे। मेरे घर में दो कमरे खाली पड़े हैं। तुम इन्हें लेकर तुरंत चलो। मैं तुम्हें लिवाने आया हूँ।'' यह सुनते ही प्रेमचंद फूट-फूटकर फिर से रोने लगा– ''दादाजी! मैं तो तबाह हो गया। गृहस्थी की सब चीजें माटी में मिल गई हैं।'' दादा ने दोबारा समझाया और बहुत ढाढस बँधाया तो वह मान गया। दादा की बूढ़ी पत्नी, बेटे और बहुओं ने उनकी अच्छी तरह सेवा कर यह बोध करा दिया कि जब पाँव में काँटा चुभता है तो उसे हाथ ही निकालता है। गरीब किसानों ने भी छोटी–मोटी सहायता पहुँचाई।

कुछ दिन के उपरांत आकाश खुलने से सूरज के दर्शन होने लगे थे। बरेली के समस्त युवा प्रेमचंद का घर बनाने में जुट गए। इसमें लड़कों ने भी कंधा से कंधा मिलाकर सहयोग दिया तो चार दिन के भीतर नया घर जस का तस बनकर तैयार हो गया। यह सब देखकर प्रेमचंद को खुशी के पंख लग गए। उसकी घरू समस्याएँ तो हल हो गईं परन्तु बेटी की शादी की चिंता उसे सता रही थी। इसकी जानकारी मिलने पर भोला और उसकी पत्नी भी प्रेमचंद के नए घर गए। उन दोनों ने जोर देखकर कहा– ''पूजा, तुम्हारी भर बिटिया नहीं है। वह पूरे गाँव की लाड़ली बिटिया है। उसका विवाह पूरा गाँव एक परिवार बनकर करेगा। यहाँ की माटी की परिपाटी एक दूजे के काम आने का दम रखती है। इसकी गंध में आनंद है।'' भाव–विह्वल होकर चुप रहने के अलावा प्रेमचंद के पास कोई चारा नहीं था। उसकी आत्मा उपकार की जय जयकार बोल रही थी। माँ–बेटी की खुशी का पार नहीं था। गाँव की पूजा मुस्कुराने लगी थी।

इधर खेती किसानी से लोग फुरसत हुए तो उधर पूजा के विवाह का समय

समीप आने लगा। मुहुर्त की तिथि भी फिर आ गई सुबह से ही गाँव के नर नारी साफ सफाई करने लगे और फिर आम के पत्तों के वंदनवारों से प्रेमचंद का घर आँगन सजा दिया। गलियों में फूलों और कलियों के झूमर लटक रहे थे। चारों ओर झाँकी जैसी शोभा देखकर दादा चिरौंजीलाल अपनी मंडली के साथ फूले नहीं समा रहे थे।

बारात आने में थोड़ी ही देर थी। ज्यों ही बैलों की घंटियों की टन-टन की आवाज आने लगी त्योंही लोग समझ गए कि बाराती बैलगाड़ियों से अब पहुँच ही रहे हैं। ग्रामीण पोशाक में सजे हुए सभी लोगों के चेहरों पर चमक थी। ऊपर से रात में चाँदनी छिटकी हुई थी। उजियार में कमी न हो इसलिए ग्रामवासी अपने-अपने हाथों में लालटेन लिए विवाह स्थल पर उपस्थित थे। घरों में अँधियार है लेकिन बाहर तो खूब उजियारा है। इस बात से वे प्रसन्न थे। ''लो, बारात आ गई'' का शोर सुनते ही सब चहकने लगे। बारात भारी बरगद के नीचे ठहराई गई। दूल्हे के पिता ने बारात देर से आने पर क्षमा माँगकर बड़प्पन का परिचय दे दिया था। जल्दी से घरातियों ने बारातियों को पंगत में बैठाकर पलाश के बने पत्तलों पर भोजन परोसा और सत्कार के द्वारा उनका मन मोह लिया।

अब ढोल, मँजीरे, ढपली और बाँसुरी के स्वर गूँज रहे थे। बारात हाथी की चाल से प्रस्थान कर रही थी। सुंदर, सजे हुए दूल्हे राजा की छबि देखकर कन्या पक्ष के लोग हँसते हुए आपस में यह चर्चा कर रहे थे- ''अपनी पूजा बड़भागिनी मोड़ी है, आँखों जैसी कित्ती नोनी जोड़ी है।'' अगवानी के समय दोनों समधी हावभाव से मिले तो सयाने ग्रामीण जन सयाने बरातियों से लिपटकर भेंट करते रहे और इसके बाद उछाह से भरे युवकों ने उस पक्ष के युवकों के गले में फूलों के बदले बाहों की मालाएँ पहनाने के दृश्य से उन्हें मोर सा विभोर कर दिया। सारे बच्चे नाचते-कूदते हुए पीपल के पत्तों से बनाई गई बीन बजा रहे थे।

बारात द्वारा पर आ चुकी थी। नेगचार कराने हेतु पुरोहित जी पधारे हुए थे। भाँवर पड़ने की वेला में दुल्हन बनी पूजा बिटिया घर से केला के पेड़ और जामुन के पत्तों से बने मंडप की ओर कुछ लजाती हुई सहेलियों के संग चल पड़ी थी। गाँवभर के लड़के अपने हाथों को पाँवड़े बनाकर बिछाए थे। पूजा उनकी हथेलियों पर महावर लगे पैर रखती हुई आगे बढ़ रही थी। मंडप में रखे कलश के दीये रोशनी बिखेर रहे थे। महिलाएँ गारी गा रही थीं। चिरौंजीलाल, बंशीदादा जैसे कुछ सम्पन्न लोगों ने अगर जमकर सहायता की तो छोटे किसान भाइयों ने चंदा और अनाज-पानी की सहायता कर पुण्याई का लाभ प्राप्त किया। प्रेमचंद की पत्नी सबके प्रति कृतज्ञता अपने जी से उलीच रही थी। बरेली की कन्याएँ, ब्याह के रिझाऊ दृश्य देखकर गेहूँ और धान की बालियों के समान इधर से उधर झूम रही थी।

मंडप में दूल्हा-दुल्हन की गाँठ जुड़ाई होते ही पाँव पुजाई का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। पाँव पूजने वालों का ताँता सा लग गया। विवाह रातभर चलता रहा। सवेरा होते ही चिरैया चहचहाने और मँडराने लगी। क्योंकि उन्हें भी ऐसे अद्‌भुत उत्सव का सुख प्राप्त हो रहा था। बारातियों को खिचड़ी तथा गुड़ का अल्पाहार कराया गया। इसके बाद बड़े दोने में भरकर मलाईदार दूध पिलाया गया।

सूरज दो बाँस ऊपर चढ़ चुका था। विदा हो रही पूजा के पैर छुए जा रहे थे। दहेज के रूप में ग्रामवासियों ने दाल, चावल, बिजना और पैसे दिए। टीका के समय प्रत्येक बाराती को नारियल से सम्मान दिया गया। पिता के बाद माता ने पूजा को छाती से लगाते हुए कहा- ''हे बिट्टी! इस गाँव की मिट्टी की लाज रखना। ऐसे उपकारी गाँव को कभी नहीं भूलना, इसे जीवनभर अपना मायका समझना।'' मुन्नीबाई के साथ खड़ी सभी महिलाओं की आँखों से आँसू झर-झर बह रहे थे। बच्चियाँ, दीदी को एक टक देख रही थीं।

बेटी पूजा डोली में बैठ चुकी थी। आगे बैलगाड़ियां चल पड़ी थीं। गाँव की हद में खड़ा समूचा गाँव हवा में हाथ तब तक लहराता रहा जब तक बाराती दिखाई देते रहे। डोली में बैठी अपनी ससुराल जा रही पूजा घूँघट उठाकर गीले नयन से सबके प्यार का आभार जताती गई। सारे दृश्य हृदय के पोर-पोर को हिलोर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे पूरे गाँव ने एक साथ गंगा नहा लिया है।

- उमरियापान (म.प्र.)

ईशु मेरा भाई है

कहानी : डॉ. राजीव गुप्ता

राधा चाची ने जैसे ही घर में पाँव रखा, मैं छिपने की कोशिश करने लगा।

मुझे पता था कि अब चाची माँ से मेरी शिकायत करेंगी। कल शाम को ईशु (ईश्वर) से मेरा खेल–खेल में झगड़ा हो गया था। मैंने तेश में आकर उसके दो झापड़ रसीद कर दिए थे और धक्का देकर गिरा दिया था वह रोता हुआ घर चला गया था। तभी से मैं डर रहा था कि चाची मेरे घर आकर जरूर मेरी खबर लेंगी या माँ से झगड़ा करेंगी।

वैसे ईशु मुझसे छोटा था। मैं कक्षा ७ में पढ़ता था और वह बेचारा तो अभी चौथी कक्षा में ही था। रोज सुबह मेरी अंगुली पकड़ कर गाँव की पाठशाला में जाया करता था, जो कि हमारे घर से लगभग ३ किलोमीटर दूर थी।

कल तो उसके जाने के बाद कोई हंगामा नहीं हुआ था, पर आज चाची को अपने घर में आते देख कर ही मैं समझ गया कि अब वह घड़ी आ गई है, जिसका मुझे डर था। चाची अचानक आई थीं और शायद उन्होंने मुझे भूसे वाली कोठरी में छिपते देख भी लिया था।

उनके हाथ में दो बड़े–बड़े झोले थे। जिन्हें बड़े ही उत्साह से उन्होंने हिलाते हुए मेरी माँ से कहा, ''दीदी! बाजार करने नही चलना........?'' उनकी आवाज में

गुस्सा जरा सा भी नहीं था।

मुझे यह सुनकर बड़ी तसल्ली हुई कि चाची मेरी शिकायत करने नहीं, बल्कि बाजार जाने के लिए माँ को बुलाने आई हैं। हाँ, आज रविवार था और मेरी उसी पाठशाला के खेल के मैदान में साप्ताहिक हाट बाजार लगा करता था, जहाँ मैं और ईशू पढ़ते थे। वहाँ ग्रामीण जीवन से संबंधित अधिकतर वस्तुएँ मिल जाती थीं।

कल शायद ईशु ने घर जाकर मेरी शिकायत नहीं की थी। इसीलिए तो चाची इतना शांत थी, नहीं तो ईशु के लिए तो वह हमेशा हर किसी से लड़ने के लिए तैयार रहती थीं। मैंने सोचा शायद ईशु खुद ही डर गया होगा, क्योंकि गलती उसकी ही थी। वह मेरी सारी इमली लेकर भाग रहा था, जो कि मैंने ढेले मार मार कर बड़ी कठिनाई से तोड़ी थीं।

जब मुझे विश्वास हो गया कि सब ठीक–ठाक है, चाची जरा भी नाराज नहीं हैं, तो मैं चुपके से भूसे वाली कोठरी से निकला और माँ और चाची के पास जाकर खड़ा हो गया। चाची मुझे देखकर मुस्कराई और मेरी पीठ थपथपाती हुई माँ से बोलीं, ''दीदी! जल्दी तैयार हो जाओ, लौटते हुए बहुत देर हो जाएगी। पाँच तो बजने ही वाले हैं।''

माँ बड़े ही असंमजस में थीं। वह हमेशा बाजार जाने के लिए लालायित रहती थीं, क्योंकि इसी बहाने वह थोड़ घूम–फिर आती थीं और घर–गृहस्थी की जरूरी वस्तुएँ भी ले आतीं। पर आज उन्हें बहुत काम था, अभी दो–दो भैसें दुहनी थीं और खेत से उनके लिए हरा चारा भी लाना था। पिताजी बाहर गए हुए थे। नहीं तो ये सारा काम वही देखते थे, पर मुझे देखते ही उन्होंने समाधान भी निकाल लिया।

बहू, मैं तो आज नहीं जा पाऊँगी। तुम ऐसा करो दीपू को अपने साथ ले जाओ। कहते हुए माँ ने एक बड़ा सा झोला मुझे थमाया और चाची को पैसे देते हुए समझाने लगी कि बाजार से क्या–क्या लाना है।

चाची को माँ के बाजार न जाने से थोड़ी निराशा हुई, क्योंकि उन दोनों में बहुत पटती थी और बातें करते–करते रास्ता कब कट जाता था, उन्हें पता ही नहीं चलता था। वे माँ की समस्या जान कर वह मुझे लेकर ही बाजार को चल दीं।

अब मुझे फिर डर लगा कि रास्ते में कहीं चाची मुझे डाँटे ना। हो सकता है ईशु ने कह ही दिया हो। घर में वह माँ का लिहाज कर रही हों। लेकिन आधे रास्ते तक भी जब उन्होंने कुछ नहीं कहा तो मुझे पूरा विश्वास हो गया कि हम लोगों के झगड़े के बारे में उन्हें कुछ पता नहीं है।

लेकिन ऐसा हो कैसे सकता था, ईशु का तो घुटना छिल गया था। उन्होंने देखा तो होगा ही। हो सकता है ईशू ने झूठ बोल दिया हो कि वह खुद फिसल गया था। वैसे भी तो चाची उसे इमली खाने से डाँटती हैं। उसका गला जो खराब हो जाता है। यही सब सोचता-सोचता मैं बाजार पहुँच गया।

हम लोगों ने बहुत सारी खरीददारी की। हमारे तीनों झोले ठसाठस भर गए। चाची ने एक चाट के ठेले पर रुक कर टिक्की और पानी बतासे खाए और मुझे भी खिलाए। मेरे बहुत मना करने पर भी तोताराम की मशहूर कुल्फी भी खिलाई। फिर हम लोग बाजार से निकल कर सड़क के किनारे आकर खड़े हो गए और टैक्सी का इंतजार करने लगे जो शहर जाती हुई हमारे गाँव से होकर ही गुजरती थीं। अब पैदल ही इतने ठसाठस भरे झोले लेकर गाँव तक जाना संभव नहीं था। वैसे भी टैक्सी वाला गाँव तक के दो-दो रुपए ही लेता था।

टैक्सी के इंतजार में सड़क के किनारे खड़े हुए चाची ने मुझसे अचानक ही पूछा, ''दीपू बेटा! ईशु विद्यालय में मन लगा कर पढ़ता तो है?''

मुझे उनके इस प्रश्न से कुछ आश्चर्य हुआ। मैंने सकुचाते हुए कहा, ''हाँ चाची! ईशु पढ़ने में तेज है। मैंने मास्टर साहब को भी कभी उसे डाँटते हुए नहीं देखा।''

सुनकर चाची को संतोष हुआ। वह कुछ देर चुपचाप खड़ी रहीं, फिर बोलीं, ''दीपू बेटा! ईशु अभी छोटा है, विद्यालय में उसे कोई तंग तो नहीं करता है? मारता-पीटता तो नहीं है?''

''नहीं तो चाची! ऐसा तो मैंने देखा नहीं। वह तो बहुत सीधा है।'' मैं अब समझ गया था कि चाची आखिरकार क्या कहना चाहती हैं, पर कह नहीं रही है। मैं उस समय स्वयं को अपराधी अनुभव कर रहा था। तभी एक टैक्सी वहाँ से गुजरी। वह भरी हुई थी। मगर फिर भी हम दोनों किस तरह से उसमें समा गए।

तीन किलोमीटर की दूरी होती ही कितनी है। थोड़ी सी देर में हम लोग गाँव पहुँच गए। चाची घर तक चल कर मेरे साथ आईं। दरवाजे के बाहर स्नेह से मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए बोली, ''ईशु तुम्हारे छोटे भाई जैसा है, दीपू! उसका ध्यान रखा करो।''

इसके बाद वह माँ को बाकी बचे पैसे देकर अपने घर चली गई।

दूसरे दिन ईशु हमेशा की तरह उछलता-कूदता पाठशाला जा रहा था और मैं बड़ी सावधानी से उसकी अंगुली पकड़े हुए था।

-फर्रुखाबाद (उ.प्र.)

पेड़ों की भरपाई

कहानी : संतोष श्रीवास्तव 'सम'

अचानक सोनू को यह क्या हुआ, वह अपनी मित्र मंडली को छोड़ बड़ी तेज गति से उस ओर भागा, जहाँ कुछ समय पहले ही ठक्-ठक् की आवाज आनी शुरु हुई थी। वह सीधे उस स्थान पर पहुँच गया और उस पेड़ के सामने खड़ा हो गया, जिसे बड़ी निर्ममता से एक व्यक्ति के द्वारा काटा जा रहा था। वह उस व्यक्ति से बोला ''भाई साहब! इस निरपराध पेड़ ने आपका क्या बिगाड़ा है? जो आप इसे काटने के लिए तुले हुए हो। इस पेड़ को मत काटो।'' सोनू के पीछे-पीछे कुछ उसके मित्रगण भी वहाँ पहुँच चुके थे। उनमें से दीपांशु ने पूछा ''सोनू तुम ये कर क्या रहे हो? क्यों जबरन इस व्यक्ति को पेड़ काटने से रोक रहे हो?'' सोनू कहने लगा ''दीपांशु! शायद तुम्हें नहीं मालूम ये पेड़ हमें जीवन देते हैं। हवा, पानी सब कुछ तो हमें इन्हीं से मिलता है फिर हमारा भी तो कर्त्तव्य होता है कि हम इसे काटने से बचायें।'' दीपांशु हंस पड़ा ''अरे सोनू! वह तो हमें भी मालूम है, पर इस व्यक्ति का क्या दोष? न ही यह जगह इसकी है न पेड़, और न हाथों में थमी कुल्हाड़ी। इसे तो बस किसी ने कुल्हाड़ी पकड़ा दी है, इस पेड़ को काटने के लिए। यह तो एक मजदूर है इसे जो भी काम दिया जायेगा यह करेगा। इसे तो सिर्फ अपना जीवन चलाने दो पैसों की आवश्यकता है, सो यह लकड़हारा ऐसा कर रहा है। यदि सचमुच हमें इन पेड़ों को काटने से बचाना है तो इसके मालिक से मिलना पड़ेगा।'' सोनू बोला, ''हाँ मुझे इसके मालिक से मिलना है।'' उस मजदूर से जब वे उसके मालिक के

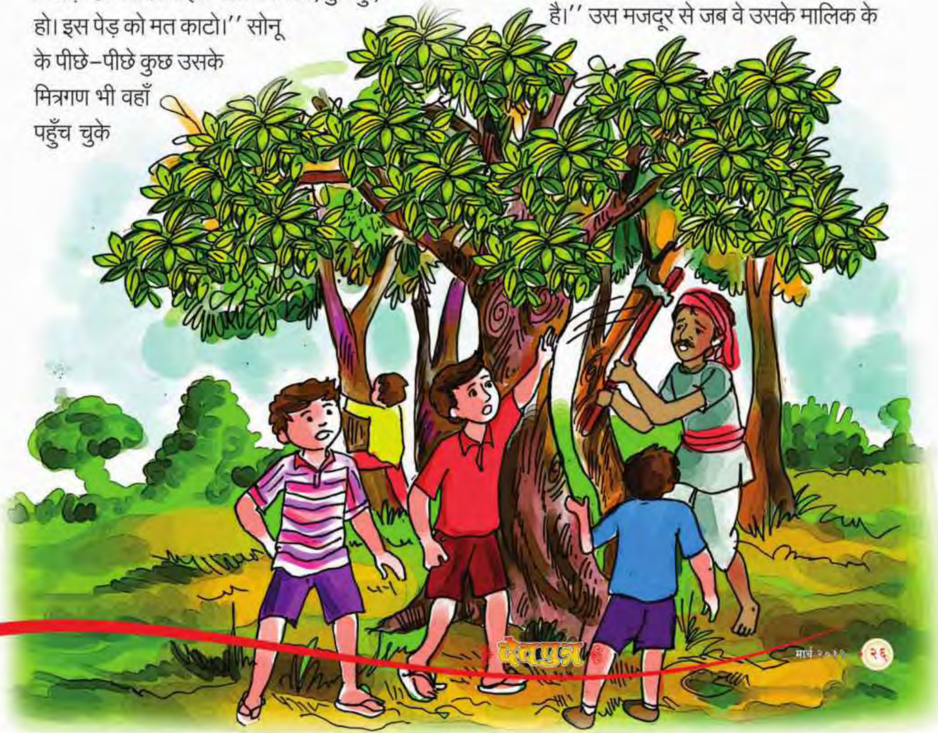

बारे में पूछते है तो उसने बताया है ''इसके मालिक सेठ धरमदास है। आप सब उनसे मिल लो, यदि वे कहेंगे तो मैं यह पेड़ काटना बंद कर दूंगा।''

वे सभी मित्रगण धरमदास के घर चल पड़े। सेठ धरमदास अपने बगीचे में चिड़ियों को दाने चुगाते बैठे थे। जब सोनू, दीपांशु व अन्य मित्र वहाँ पहुँचे तो सेठ धरमदास ने उन बच्चों को सम्मानपूर्वक उस बगीचे में बुला लिया और उन्हें बैठने को कहा। तभी सोनू बोल पड़ा है, ''सेठजी हम यहाँ जिस छांव में बैठे हुए है यदि इन पेड़–पौधों को हम काट दें तो बैठना क्या अच्छा लगेगा?'' सेठजी चौंके, ''ये तुम कैसी बातें कर रहे हो? बच्चो! यह हमारा बगीचा है बड़ा जतन कर हमने इन पेड़–पौधों को यहाँ लगाया है। दीपांशु बोला, ''सेठजी! आप सच कह रहे हैं, तो फिर आपका मजदूर उधर बाहर जो पेड़ हैं उन्हें क्यों काट रहा है? वह पेड़ भी तो तिल तिल कर बढ़ा होगा। वह पेड़ भी राहगीरों को छाया प्रदान करता है। हवा–पानी से मानव को सिंचित करता है। क्या उसे काटकर हम पेड़ को व संपूर्ण प्रकृति को नुकसान नहीं पहुँचा रहे है?'' सोनू कह उठा, ''नहीं सेठ! जी हम आपसे प्रार्थना करते है कि उस मजदूर को कह दें कि वह उस पेड़ को न काटे।'' सेठ धरमदास बच्चों को भावना को समझ गए। वे बोले ''बच्चो! मैं तुम्हारी भावना का आदर करता हूँ। पर यह कार्य मैं रोक नहीं सकता। मैंने इस कार्य के लिए पूंजी लगाई हैं। इन पेड़ों को काटकर वहाँ धर्मशाला बनाना है। यह एक आवश्यक कार्य है। इस ग्रामीण क्षेत्र में जहाँ दूर दूर तक जंगल फैले हुए हैं, कोई धर्मशाला न होने से पर्यटकों व अन्य आगंतुकों को रुकने में परेशानी होती है। यह धर्मशाला बनाकर मैं उनके लिए सुविधा जुटा रहा हूँ। जहाँ वे ठहर सकेंगे और कोई काम हो तो मैं तुम्हारी अवश्य सहायता करूँगा।''

सोनू, दीपांशु सेठ धरमदास के यहाँ से प्रस्थान कर जंगल की ओर टहलने निकल पड़े। दीपांशु, सोनू से

कहने लगा ''सोनू! सेठ जी धर्मशाला बनाकर काम तो अच्छा कर रहे हैं। धर्मशाला बनवाने के लिए स्थान चाहिए, तो इन पेड़ों को काटना मजबूरी है। सोनू कहता है, सो तो ठीक है दीपांशु लेकिन सेठ के इस कार्य का परिणाम इन पेड़ों को काटकर क्यों हासिल हो। मुझे तो इन पेड़ों की चीख सुनी नहीं जाती। जब कुल्हाड़ी इन पेड़ों पर पड़ती है तो मुझे ऐसा लगता है कि ये कुल्हाड़ी मेरे शरीर पर पड़ रही है। मैं बर्दास्त नहीं कर पाता। दीपांशु कहता है– ''अहा! वह देखो उन पेड़ों में कोयल बैठी कूक रही है। कितनी मधुर आवाज है न उसकी। ऐसा लगता है कि बस यहीं इन मधुर आवाजों के बीच रह जायें। कितना सुहाना लग रहा है इन जंगलों के बीच। जीवन का सारा आनंद यहीं तो मिलता है। हर शोर–गुल से दूर बस प्रकृति की गोद में समाये रहे। सच यहाँ तो जीवन मिलता है।'' सोनू तभी कह उठता है, ''दीपांशु! मेरे मन में एक बात आ रही है। यदि यह काम कर गया तो सेठजी की धर्मशाला भी बन जाएगी और इन पेड़ों को पुनर्जन्म भी प्राप्त हो सकता है।'' ''वह क्या? कैसे दीपांशु?'' सोनू ने पूछा। सोनू बताता है, ''यदि हम सेठ धरमदास से यह कहें कि आप इस धर्मशाला निर्माण में जितने पेड़ काट रहे हैं, उतने ही नये पौधे धर्मशाला के आसपास लगवायें तो इसकी भरपाई तो हो ही सकती है।'' दीपांशु को भी यह बात जंच गई। वह भी सहमति देकर सेठ जी के पास चलने लगता है। दोनों तत्काल सेठ धरमदास के यहाँ पहुँचे।

सेठ धरमदास ने दोनों बच्चों को बुलाकर बैठाया और कहा, ''बोलो बच्चो! अब कौन–सी समस्या या सुझाव लेकर आए हो।'' सोनू बोला ''सेठ जी! आप से कुछ कहना चाहते हैं। एक सुझाव देना चाहते हैं।'' सेठजी बोले– ''हाँ हाँ बोलो– क्या कहना चाहते हो!'' दीपांशु ने कहा है– ''सेठ जी! आप धर्मशाला बनवा रहे है हमें कोई आपत्ति नहीं हैं क्योंकि यह भी एक पुण्य का काम है। परन्तु हम चाहतें है कि...'' वह सोनू की तरफ देख कर कहता है, ''सोनू! तुम्हीं बताओ न। सोनू बोल पड़ता है, हाँ सेठजी हम चाहते हैं कि धर्मशाला निर्माण में जितने पेड़ कट रहे हैं, उतने पेड़ धर्मशाला निर्माण के पश्चात् आसपास लगाये जायें तो इन पेड़ों को नया जीवन मिल सकता है। इन पेड़ों की पूर्ति हो सकती है। सेठ जी कुछ समय तक मौन रहे फिर चेहरे पर एक मुस्कान लाकर कहते हैं ''सच, तुम लोगों ने बहुत अच्छा उपाय सुझाया है। मुझे ऐसा करने में कोई आपत्ति नहीं है। निश्चित ही ऐसा किया जा सकता है। धर्मशाला बन जाने पर उचित स्थान देखकर इस कार्य में जितने पेड़ कटेंगे उतने पौधे लगवाने का मैं वचन देता हूँ, और तुम बच्चों का सहयोग भी इस नेक कार्य मे चाहता हूँ।''

कुछ दिनों के पश्चात् धर्मशाला बनकर तैयार हो गई। सेठ धरमदास ने दिए वचन के अनुसार धर्मशाला के चारों और पौधे अपने हाथों से लगाए। सोनू व दीपांशु का मन आज अतिप्रसन्न था। मानो ये उनके लक्ष्य में सफल हो चुके थे।

– कांकेर (छ.ग.)

सेवक जी की स्मृति में बाल कवि सम्मेलन सम्पन्न

नई दिल्ली। बाल साहित्य के भगीरथ निरंकार देव सेवक के जन्मशताब्दी वर्ष का पहला आयोजन नई दिल्ली के राजीव गांधी फाउंडेशन स्थित वंडररूम में पूरे उल्लास के साथ १३ जनवरी को सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर आयोजित बाल कवि सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें बच्चों ने बढ़ चढ़कर भाग लिया। इस बाल कवि सम्मेलन का संचालन सुप्रसिद्ध बाल साहित्य लेखक डॉ. नागेश पांडेय 'संजय' ने किया।

रावेंन्द्र कुमार 'रवि' को मिला हरिकृष्ण देवसरे बाल साहित्य पुरस्कार २०१८

खटीमा। भारत में सबसे प्रतिष्ठित बाल साहित्य का सर्वोच्च पुरस्कार 'हरिकृष्ण देवसरे बाल साहित्य पुरस्कार २०१८' रावेंद्रकुमार 'रवि' को मिला। रवींद्र भवन, दिल्ली स्थित साहित्य अकादमी सभागार में आयोजित एक भव्य समारोह में यह पुरस्कार राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा प्रकाशित उनकी बालोपयोगी पुस्तक 'वृत्तों की दुनिया' के लिए दिया गया। हरिकृष्ण देवसरे बाल साहित्य न्यास की तरफ से सुविख्यात वैज्ञानिक और विज्ञान संचारक, राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना संस्रोत संस्थान के निदेशक, प्रोफेसर डॉ. मनोज पटैरिया, न्यास की अध्यक्षा विभा देवसरे, न्यास के प्रबंधक शशिन देवसरे और साहित्य अकादमी के पूर्व उपसचिव बृजेन्द्र त्रिपाठी द्वारा रावेन्द्र को पुरस्कार स्वरूप रु. ७५००० की धनराशि और सम्मान पत्र प्रदान किया।

राजकुमार जैन 'राजन' को श्री कन्हैयालजाल नन्दन सम्मान

भोपाल। दुष्यंत कुमार स्मृति पांडुलिपि संग्रहालय, भोपाल द्वारा अपने वार्षिकोत्सव 'प्रणाम २०१८' का तीन दिवसीय आयोजन भोपाल में सम्पन्न किया गया। जिसमें देश की कई ख्यातनाम हस्तियों को सम्मानित किया गया।इस अवसर पर आकोला (राजस्थान) के साहित्यकार राजकुमार जैन राजन को भी बाल साहित्य सृजन, सम्पादन, उन्नयन एवं हिन्दी भाषा के देश विदेश में प्रचार–प्रसार के क्षेत्र में महनीय कार्य के लिए 'कन्हैयालाल नंदन सम्मान' से समादृत किया गया। यह सम्मान ख्यातनाम वरिष्ठ कहानीकार व दूरदर्शन के पूर्व उपनिदेशक श्रभ शशांक, संग्रहालय के निदेशक श्री राजुरकर राज, प्रसिद्ध रचनाकार पंकज सुबीर एवं डॉ. नीलम कपूर के हाथों मिला।

गाँव की हवा

कहानी : गोपाल माहेश्वरी

''माँ! मैं दोस्तों के साथ कबड्डी खेलने जा रहा हूँ।'' अपनी आज की पढ़ाई पूरी करके विनय ने पूछा तो माँ ने सहर्ष अनुमति दे दी। बाहर निकलते समय उसकी दृष्टि आंगन में पड़ी खटिया पर चादर ताने सो रहे अपने ममेरे भाई प्रमोद पर पड़ी। प्रमोद उसके वैभव मामा का इकलौता बेटा है। वह कई बार गया है उनके यहाँ। इन्दौर की एक शानदार कालोनी में बड़ा सा बंगला है उनका।

पहले तो मामाजी भी अपने पिता के साथ किसानी करते थे। दिनरात खेतों को पसीने से सींचते फिर भी नानाजी के घर से अभावों का डेरा कभी न उठा। ऋण पर ऋण चढ़ता गया और खेत भी हाथ से चले गए तो मामाजी विवश होकर शहर में आ बसे। कुछ समय ने साथ दिया, कुछ मेहनत रंग लाई और वे कुछ ही वर्षों में शहर के बड़े व्यापारियों में गिने जाने लगे। आज सब कुछ होने पर भी अपने गरीबी के दिन वे भूले नहीं। लेकिन प्रमोद तो चांदी के चम्मच से खाते हुए ही बड़ा हो रहा था। नौकर– चाकर, गाड़ी–बंगला, सुख–सुविधाओं ने उसे घमण्डी बना दिया था। उसे न किसी से मिलना जुलना पसंद था न कहीं आना–जाना। उसे सब अपने से हीन ही लगते थे। आवाज लगाते ही हर काम के लिए नौकर दौड़े आते। कोई काम तनिक सा भी मन के विपरीत हुआ तो आग बबूला हो उठता। बात बात में चिढ़ना, झिड़कना उसका स्वभाव बन चुका था। एकाध अपवाद को छोड़कर विद्यालय में भी उसकी किसी से मित्रता न थी। वैभव मामा इस स्वभाव से बहुत परेशान थे। वे साफ–साफ देख रहे थे कि उनका इकलौता बेटा घमण्ड के कारण कितना एकाकी हो गया है।

सारी समझाइश, सारे प्रयास विफल हो जाने पर आज उन्हें एक कठोर निर्णय लेना ही पड़ा। अंतिम उपाय के रूप में उन्होंने तय कर लिया कि प्रमोद अब छात्रावास में रहकर पढ़ेगा। उनका विचार था कि छात्रावास में सामान्य बच्चों के साथ वह स्वावलम्बी, मिलनसार, अनुशासित बन सकेगा। लेकिन एकदम से इतने सुविधापूर्ण जीवन से, छात्रावास के कठोर जीवन में वह कैसे ढल सकेगा? यह चिंता भी उन्हें सता रही थी। प्रमोद की माँ अर्थात् सुखमणि मामी का तो हाल और भी बुरा था। अपने हृदय के टुकड़े को कैसे छोड़ पाएगी वह? लेकिन और कोई उपाय भी नहीं था प्रमोद के भविष्य को सुधारने का।

वे सब इसी सोच में उदास बैठे थे कि सुबह सबेरे ही विनय की माँ अर्थात् शांति आ पहुँची। देहरी पर से ही सबको चौंकाते हुए बोली ''राम राम भैया–भाभी। पाँय लागूं। उनके स्वर में मायके पहुँचने की चहक थी।

''अरे शांति तू! पूरी उमर है तेरी, मन ही मन याद ही कर रहे थे तुझे।'' वैभव भी खिल उठे।

सुखमणि मामी आगे बढ़ कर गले मिली। बोली ''आओ बाई सा.! बैठो।''

''बैठूं तो सही पर अपना प्रमोद नहीं दिख रहा। आज तो रविवार है शाला तो गया न होगा। मित्रों से मिलने जुलने गया है कहीं?''

''यह तो उसने सीखा ही कहाँ है बहना? घुग्घू की तरह अकेला बैठा है अपने कमरे में। टीवी., मोबाईल या कम्प्यूटर ये ही उसके मित्र, ये ही सम्बन्धी, बाकी सब बैरी।'' वैभव का स्वर वेदना से गीला था।

सारी व्यथा कथा सुनकर सुखमणि मामी सिसकते हुए बोली ''अब आप ही कहो बाई सा! अपने हृदय के टुकड़े को न बिगड़ते देखा जाए न छोड़ते बने है।''

''चिंता मत करो। राम जी सब भली करेंगे।'' ढाढस बंधाते हुए शांति ने प्रमोद के कमरे का दरवाजा खोल कर झांका। प्रमोद पलंग पर औंधे मुँह पड़ा सिसक–सिसक कर रो रहा था। भुआ ने भतीजे के सिर पर स्नेह से हाथ फेरते हुए पुचकारा।

''मैं कहीं नहीं जाऊँगा। मुझसे कोई मत बोलो। चले जाओ मेरे कमरे से।'' प्रमोद ने बगैर देखे ही चिल्लाते हुए हाथ झटक दिया।

शांति मुस्कुराते हुए बोली ''भाभी! मैं सोचती हूँ कि प्रमोद को थोड़े दिन अपने गाँव ले जाऊँ। पर इसकी पढ़ाई?''

सुखमणि के लिए तो जैसे बादलों भरी रात में अचानक चन्द्रमा जगमगा उठा। वह प्रसन्नता से चहक उठी ''अरे वाह बाई सा.! यह तो बहुत ठीक रहेगा। पढ़ाई की चिंता नहीं। अब तो दीवाली की छुट्टियां लग रही हैं फिर विनय भी तो दसवीं में ही है उसके साथ पढ़ लेगा थोड़े दिन।''

प्रमोद समझ गया। उसने जिसका हाथ झटका था वह माँ नहीं बुआजी थी। उसे अब अपनी गलती पर लाज आ रही थी, इसलिए ऐसा दिखावा करते पड़ा रहा जैसे उसे नींद आ रही हो। वह ऐसे घण्टों पड़े रहने का अभ्यस्त था।

तभी उसे पिताजी का स्वर सुनाई पड़ा ''अजी, आज तक गए हैं राजकुंवर किसी के यहाँ जो आज चले जाएंगे? खिड़की से झांकना तक तो चाहते नहीं, गाँव जाएंगे। बड़े बाप के बेटे है। कार में बंद होकर जाते हैं, कार में बंद चले आते हैं। दुनिया में कोई इनकी जोड़ का पैदा ही नहीं हुआ, जिससे ये मिलना पसंद करें। मैं कहता हूँ तैयारी कर दो सुबह छोड़ आऊँगा इन्हें छात्रावास।''

आँखें मूंदे पड़ा प्रमोद यह नहीं जान सका कि तीनों आपस में इशारा कर मुस्कुरा रहे हैं, और पिताजी बनावटी गुस्सा कर रहे हैं। लेकिन माँ ने जैसे ही कहा ''आप ठीक कहते हैं। मैं तैयारी करती हूँ।'' तो प्रमोद उछल कर खड़ा हो गया।

बुआ जी से लिपटते हुए बोला ''नहीं नहीं, मैं बुआजी के साथ जाऊँगा। बल्कि मैं तो पहले से ही सोच रहा था कि विनय से मिल आऊँ।'' वह स्वयं ही फटाफट अपने कपड़े बेग में ठूँसने लगा।

शांति हँस पड़ी ''अरे! तुरंत ही चलना है क्या?''

''हाँ, दस बजे बस है गाँव की, साढ़े नौ तो बज ही चुके हैं।'' प्रमोद उतावला हो रहा था।

''तुम्हें बस का क्या मालूम? मुझे तो याद नहीं कभी बस में बैठे भी हो तुम।'' पिता ने पूछा।

पुत्र ने उत्तर दिया। ''मालूम है पिछली बार विनय आया था तब दस की बस से ही लौटा था।''

''अच्छा अच्छा। पर बाई सा.! अभी अभी तो आई हैं न भोजन न कलेवा। तुमने तो प्रणाम तक नहीं किया उन्हें। उन्हें लौटा दें? क्योंकि तुम्हें जाना हैं!''

सुखमणि ने टोका।

उत्तर शांति ने दिया ''नहीं भाभी ! आप सबने मिलने आ गई थी बस, दस वाली बस तो मुझे भी पकड़ना ही है।

''तो बस दस मिनिट मिलने गाँव से आई हो?'' वैभव ने पूछा।

''नहीं भैया! इन्दौर तो मैं कल ही आ गई थी। एक पुरानी सहेली रहती है यहाँ सुखलिया में। उसके भाई के बेटे का मुण्डन था कल।''

''सहेली के भाई के बेटे का मुण्डन। वह भी आपके बचपन की। इसलिए गाँव से आई हैं आप?'' प्रमोद आश्चर्य-चकित था।

''हाँ! बचपन से बहिन जैसा माना है उन्होंने, तो आना न पड़ता?'' शांति बोली।

''तुम नहीं समझ सकोगे बेटा! तुमने यह सीखा ही नहीं है।'' पिता ने ताना कसा।

शांति ने बात सम्हाल ली'' ''चलो अब सीख जाएगा। कौन बूढ़ा हो गया है।'' फिर भाभी से बोली ''तो भाभी आज तो मुझे भी जल्दी है। तीन बजे राधा काकी की बहू की गोद-भराई में पहुँचना है। पर आई थी तो आप सबसे मिले बिना कैसे लौट जाती?''

प्रमोद के चेहरे पर फिर आश्चर्य गहराया तो उसकी माँ ने समझाया '' बाई सा! के गाँव की ही है पर अब चार कोस दूर दूसरे गाँव में जा बसी है। मैं भी मिली हूँ उनसे। बड़ा प्रेम रखती हैं।''

''हाँ, अपने गाँव आएगी तो आधघड़ी पानी पीने के बहाने ही सही, मिलकर जरूर जाती है।'' शांति बोली।

''तो बहिना! भोजन करके निकलना। कार छोड़ आएगी।''

''मैं नहीं जाऊँगी तुम्हारे दड़बे में। अरे, बस में जान-पहचान के कितने लोगों से मिलना हो जाता है, मुझे तो बस ही भली।'' प्रमोद ने कार ऐसा तिरस्कार पहली बार देखा था, अन्यथा वह तो उसे घमण्ड करने की वस्तु ही समझता आया था।

बस, वे ही प्रमोद महाशय अपनी पहली बस यात्रा की थकान उतारने कण्डों पर बनी दाल-बाटी खा कर आँगन वाले नीम के नीचे खटिया पर जो पसरे तो अब तक खर्राटे भर रहे हैं।

धूप सुनहली होने लगी है। थोड़ी देर में सारा

आकाश घर लौटते पंछियों से भर जाएगा। गाय–ढोर लौटने लगेंगे। सारा गाँव एक नई स्फूर्ति से काम में जुट जाएगा। विनय इस समय प्रतिदिन कबड्डी खेलने जाता है। उसने जाते–जाते प्रमोद की चादर खींच दी ''ऐ भाई! ये लंका नहीं है, जो कुंभकर्ण की तरह सोते ही रहो। उठो, नहीं तो पंछी बीट करके अनोखा सिंगार कर देंगे तुम्हारा।''

थोड़ा अनमना ही पर प्रमोद उठ कर विनय के साथ चल पड़ा। गाँव के सर्पिल रास्ते आवाजाही से भर उठे थे पर शहरों जैसी आपाधापी और भीड़ वहाँ न थी। सब जैसे किसी मस्ती में डूबे एक लय में बंधे आ जा रहे थे।

''राम राम काकी सा!'' विनय ने कुँए पर जाती एक महिला को कहा।

''सौ बरस जियो बेटा! सुखी रहो।'' उसने असीसा। वे आगे बढ़े सामने एक अधेड़ तेजी से सायकिल चलाते आ रहा था।

''अरे मामाजी! आज तो बड़ी जल्दी में हो?'' विनय बोला।

''हाँ रे भांजे! अपनी श्यामा की बछिया गड्ढे में गिर गई है। उसने एक पैर टेकते हुए बताया।

''अरे! मैं चलूँ मदद के लिए? विनय पूछने लगा।

''नहीं रे! हैं और लोग वहाँ। चाहो तो शाम को आ जाना मिलने।'' कहते कहते उन्होंने सायकल बढ़ा दी।

''जरूर आऊँगा मामाजी!'' विनय चिल्लाया।

''बछिया से मिलने जाओगे?'' प्रमोद व्यंग्य से हँसा।

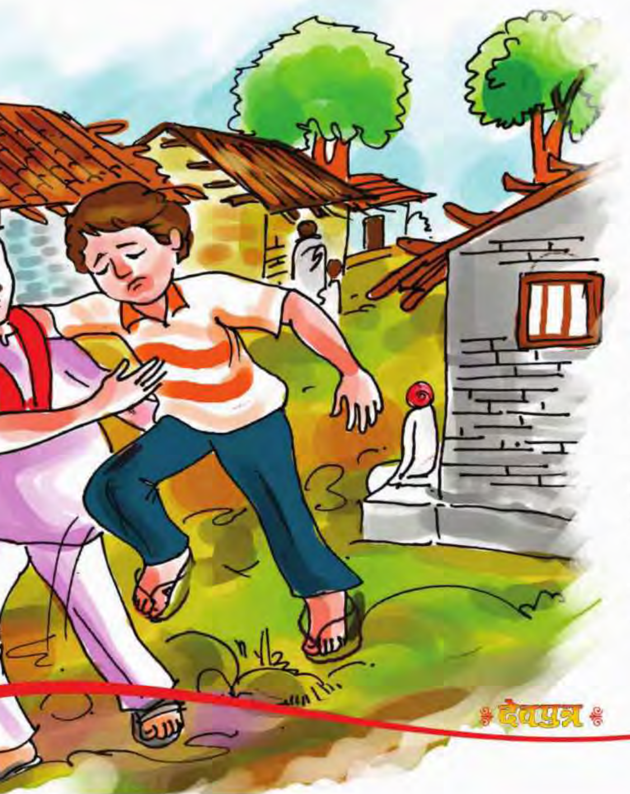

''क्यों नहीं जाऊंगा. उसकी माँ श्यामा गैया का दूध कई बार पिया है मैंने।'' विनय गंभीर था।

वह खेत में खड़े एक और किसान की ओर हाथ हिलाते पुकार उठा ''कैसे हो श्यामू दादा?''

मजे में।'' किसान प्रसन्न होकर हाथ हिला रहा था।

''यह नेताओं जैसा जनसम्पर्क क्यों भाई?'' प्रमोद ने पूछा।

''अपनों से मिलना नेताओं जैसा जनसम्पर्क लगता है तुम्हें?''

अपने? ये काका, मामा, दादा, काकी सब सगे– सम्बन्धी हैं तुम्हारे?''

''हाँ! बल्कि सगे रिश्तेदारों

से बढ़कर। गाँव में ऐसे ही सम्बन्ध होते हैं। तुम्हारे भी सम्बन्धी बन जाएंगे ये बहुत जल्दी।''

''मुझे कौन जानता है यहाँ? मेरा कोई सम्बन्ध नहीं इनसे।'' प्रमोद उपहास करते हुए बोला। तभी उसका पैर एक नुकीले पत्थर से टकराया और अंगूठा लहूलुहान हो उठा। प्रमोद लड़खड़ाया पर विनय ने सम्हाल लिया। प्रमोद खून देख कर रोने लगा।

खेत में कुँए के पास खड़े राधे काका ने उन्हें देख लिया। वे लम्बे डग भरते हुए चले आए। चोट देखकर हँसते हुए हिम्मत दिलाने लगे ''अरे ! इत्ती सी चोट से इत्त घबरा गए लाला। शहरी दिखते हो?''

उसी समय घण्टियों की रुनझुन और बैलों की धपड़–धपड़ के बीच चरड़ चूं चरड़ चूं करती एक बैलगाड़ी वहाँ से गुजरी। विनय ने पहचाना गाँव के सरपंच जी सवार थे उस पर, वह उन्हे मोहन ताऊजी कहता था। गाड़ी रोककर पूछने लगे ''पावने (मेहमान) हैं क्या? अरे। चोट लग गई क्या? कहो तो गाड़ी से छोड़ दूँ घर तक?''

विनय उन्हें मना करता तब तक प्रमोद ही आतुर होकर बोल पड़ा ''हाँ जी! छोड़ दीजिए। मैं घायल हूँ। आराम चाहिए मुझे।''

उसकी दयनीय मुद्रा पर सब मुस्कुराना चाहते थे, चोट साधारण थी पर वे हँसी दबा गए। ''आराम के लाने अपने घर जाओगे? का हमारो घर तुम्हारो नाय है। तुम्हारे ये मेहमान, हमारे मेहमान। तुम कबड्डी खेलने जाओ, लाला को हम देख लैंहे।'' फिर प्रमोद से बोला।

''''लाला! तुम इतैइ आराम कर ल्यों। चलो उठो'' राधे काका मुरैना से मालवा आ बसे थे सो खिचड़ी बोली बोलते थे।

सब सहारा देकर प्रमोद को राधे काका की मढैया पर ले आए। सरपंच जी ने पास ही ऊगे गेंदे के पत्ते तोड़े, उन्हें धोकर कुचला और अपने गमछे से चिन्दी फाड़ कर पट्टी बनाते हुए बोले ''अस्पताल जाओगे शहरीलाल। या देसी दवाई कर दें?'' फिर उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना अपने हाथ से चोटिल अंगूठे को नीम के पत्ते डाल कर उबाले पानी से धोकर गेंदे की लुगदी बांध दी।

प्रमोद की आँखों के सामने एक दृश्य तैर आया। वह अपनी कार पर घूमने जा रहा था कि सामने देखा उसी की कक्षा का छात्र विदुर सड़क पर लहुलुहान अचेत पड़ा था। उसकी मोटरसाईकिल किसी कार से टकरा गई थी और उसका सिर फट गया था। औरों की तरह वह भी कहाँ रुका था। बल्कि उसने ही चालक से कतरा कर निकल जाने को कहा था। ...और इतनी मामूली सी चोट पर।''

''लो गरम–गरम दूध पी लो लाला। और लेट जाओ।'' राधे काका की स्नेहिल बातों से उसका ध्यान लौटा। काका ने वहीं खाट पर एक पुरानी सी गुदड़ी डाल दी।

''छिः! इतनी गंदी। इस पर सोना होगा?'' वह अचकचाया। काका भांप गए। उन्होंने गुदड़ी पर झक सफेद धुली हुई धोती बिछा दी। प्रमोद लेट गया। विनय उससे पूछकर खेलने चल दिया। काका बोले चिंता मत करो हम इतैइ हैं न, लौटती बेर लिवा जाना।''

जाते जाते विनय मुस्कुरा रहा था, जाने इस जरा सी चोट पर मचाई मेरी चिल्लपों पर या राधे काका और मोहन ताऊ जी के व्यवहार से मेरे आश्चर्य पर प्रमोद ही नहीं उसकी रिश्तेदारियाँ तक पूछ डालीं। प्रमोद लज्जित था। उसे कितना कम पता था अपने ही रिश्तेदारों के सम्बन्ध में।

सिन्दूरी सांझ ने पल्लू समेटा तो रात के झिलमिलाते आँचल पर तारे चमचमा उठे। ''ओह!

आसमान में इतने सारे तारे होते हैं।'' प्रमोद पहली बार देख रहा था। झाड़ियों में झींगुर झनझनाने लगे। झिल्लियां झंकार उठीं। प्रमोद राधे काका की सायकिल के कॅरियर पर बैठ यह सब देखने में खोया-खोया मखमली अंधेरे को चीरता कब बुआ के घर आ पहुँचा पता ही न लगा।

दालान में फूफाजी अर्थात् विनय के पिता और मोहन ताऊ जी बैठे अलाव ताप रहे थे। पास ही विनय की बहिन कापी -किताबें फैलाए बैठी थी। सरपंच जी दो चार दिनों में उसे गणित के सवाल समझाने आ जाते थे। राधे काका के साथ प्रमोद लंगड़ाते हुए उनके पैर छूने झुकने लगा, तो सरपंच जी ने उसे रोकते हुए पूछा '' दुख रहा है या नहीं? पट्टी खोल दो शहरीलाल! अब खून नहीं निकलेगा।''

राधे काका ने पट्टी खोल दी, फिर वे भीतर आवाज देकर बोले ''भाभी! इन्हें हल्दीवाला दूध दे दियो।''

अंदर से हँसी भरा उत्तर आया ''अच्छा हुआ देवर जी। हमें बता दिया। हम तो जानते ही न थे।'' सब हँस पड़े।

फूफाजी बोले ''कल से तो कबड्डी खेलने जाओगे न प्रमोद! फिर चोट से डर नहीं लगेगा।''

''क्यों?'' विनय ने पूछा

''हाँ!'' प्रमोद विनय के कंधे का सहारा लेकर खड़े होते हुए बोला ''चलो चलते हैं।'' सब चौंके।

''अभी? रात में कबड्डी खेलने!'' विनय के पिता ने पूछा।

''नहीं फूफाजी! विनय के साथ मामाजी की बछिया के हाल पूछने।'' प्रमोद मुस्कुरा उठा। सब खिलखिला उठे।

'' ले चलूँगा पर एक शर्त है, पहले बताओ मेरे मामाजी तुम्हारे क्या हुए?'' विनय के प्रश्न पर प्रमोद सोचने लगा, कुछ देर बाद बोला ''तुम्हारे मामाजी मेरे हुए ताऊजी या फिर काकाजी ठीक है न?''

''शाबास प्रमोद।'' शांति ने उसे छाती से लगा लिया।

सब समझ चुके थे, लग चुकी है शहरी लाल को गाँव की हवा।

– इन्दौर (म.प्र.)

नानी का गाँव

बालप्रस्तुति : नवीन कुमार जैन

चिंतन की गर्मियों की छुट्टी शुरु हो गई थी। वह इस बार गर्मियों की छुट्टियों में अपनी नानी के गाँव जाना चाहता था। उसे विद्यालय में उसके शिक्षक ने बताया था कि गाँव का जीवन बहुत अच्छा होता है, वहाँ आपको जब भूख लगे आप ताजे फल तोड़ के खा लो, खेलने के लिए जहाँ चाहे मैदान रहता है। वहाँ के बड़े बूढ़े शाम को किसी पेड़ के नीचे या कहीं चबूतरे पर एकत्रित होते हैं। बहुत कुछ होता है गाँव में। हमारे देश की स्ववंत्रता की लड़ाई में गाँव के क्रांतिकारी आगे आए थे। गाँधी जी ने कहा था असली भारत गाँवों में ही बसता है। चिंटू गाँव के जीवन से प्रभावित होकर नानी के घर गया। गाँव से उसने पहले ही दिन बहुत से मित्र बना लिए। वह सुबह–सुबह नदी पर नहाने गया उसे नदी में तैरने में स्वीमिंग पूल से भी अधिक आनन्द आया। वह मित्रों के साथ पास के ही मंदिर में दर्शन करने गया फिर वह भोजन करके उनके साथ खेतों में घूमने गया। खेतों में उसने मित्रों के साथ बहुत मस्ती की। वह विडियो गेम और टी.वी. तो उस दिन भूल ही गया। फिर थोड़ी देर बाद पेड़ के नीचे बैठकर उसने अमरूद खाए, आम चूसे। फिर वह नानी के घर आ गया। रात को फिर बरगद के पेड़ के नीचे चौपाल में गया। रामू काका ने बच्चों को अच्छी–अच्छी कहानियाँ सुनाई चिंतन को तो बहुत मजा आया। ऐसे ही दो–तीन दिन तक चलता रहा। चौथे दिन वह मित्रों के साथ घूमते–घूमते जंगल में चला गया। वह मित्रों से थोड़ा दूर आगे निकल गया। उसे अचानक भेड़िया दिखा। भेड़िया देखकर वह चिल्लाया ''बचाओ–बचाओ'' इतने में उसके मित्र वहीं आ गए।

उसके दोस्त मोटू ने अपनी जान की बाजी लगाकर चिंतन को बचा लिया। चिंतन ने उसी समय सोचा शिक्षक जी की बात बिलकुल सही थी। गाँव के व्यक्ति बहुत साहसी व परोपकारी होते है। फिर वह नानी के घर आया। उसने नानी को सारी बात बताई, नानी ने उसे अकेले कहीं न जाने को कहा। चिंतन फिर कहानी वाले रामू काका के घर गया। रामू काका ने चिंतन को और उसके मित्रों को मीठे बेर खिलाए और अपने तोते किटकोटी लाल से मिलवाया। चिंटू को गाँव में बहुत मजा आ रहा था। फिर वह और उसके मित्र पास ही के एक वनवासी फालिये में रामू काका के साथ घूमने गए। वहाँ भील जाति का समुदाय रहता था। उसने देखा कि वहाँ महिलाएँ गुदना गुदवाएँ थी, उनका पहनावा अलग था। उसने भील जाति के साप्ताहिक हाट का आनंद लिया। वह जब नानी के घर से अपने घर को जाने लगा तो उसके मित्र गीत गाने लगे– ''खेलत खात कढ़ गए दिन अब कब मिलि हैं।''

चिंतन अपने पिता के साथ अपने घर जा रहा था, बस में वह यही सोचता रहा गाँव का जीवन कितना अच्छा होता है, खेल–खेल में सीखना कितना आनन्द आता है। गाँव के लोग कितने सरल होते हैं, स्वार्थी नहीं होते और एक दूसरे की सहायता करते हैं। इसलिए तो प्रकृति भी यहाँ निवास करती है। बस में उसकी नींद लग गई उसे सपने में गाँव, दोस्त, नदी, वन, दिखाई देने लगे।

– बड़ा मलहरा (म.प्र.)

भारत माता ग्रामवासिनी

कहानी : डॉ. सेवा नन्दवाल

सामाजिक विज्ञान पढ़ाते हुए सुदर्शन जी ने यकायक पूछ लिया– ''एक बात बताओ बच्चो! परिवार में सबसे ज्यादा प्रिय सदस्य कौन होता है? सबसे ज्यादा तुम्हें कौन भाता है?'' उन्हें लग रहा था कि विद्यार्थियों के उत्तर भिन्न–भिन्न होगें पर उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब लगभग सभी विद्यार्थियों ने हाथ खड़े कर एक स्वर में उत्तर दिया– ''माँ!''

सुदर्शन जी मुस्कुरा दिए, यह उत्तर भी उनके अपेक्षा के अनुरूप था। लेकिन जब उनकी नजर एक विद्यार्थी पर पड़ी तो वे चौंक पड़े क्योंकि उसने हाथ खड़ा नहीं किया था। अवश्य ही इसका उत्तर भिन्न होगा इस अपेक्षा के साथ उन्होंने पूछ लिया– ''क्यों भाई कुलवंत! तुम्हें अपनी माँ सर्वप्रिय नहीं?'' ''इसकी माँ सौतेली होगी''– एक विद्यार्थी मुकुल ने अनुमान लगाया। कुलवंत ने गंभीर स्वर में बताया– ''मेरी माँ नहीं है आचार्य जी।'' ''ओह''– सुदर्शन जी ने खेद प्रकट किया। इसके साथ ही शेष विद्यार्थियों की उपहास भरी दृष्टि सहानुभूति में परिवर्तित होकर कुलवंत पर स्थिर हो गई।

''बच्चो! सभी लोगों को अपनी जननी याने माँ सबसे ज्यादा प्यारी होती है क्योंकि वहीं उनको इस दुनिया में लाई होती है''– सुदर्शन जी ने सार निकाला।

''आचार्य जी मेरे दादाजी कहते हैं, माँ संसार का सबसे पवित्रम शब्द है। ओम, राम, रहीम ये शब्द इतने पवित्र इसलिए माने गए हैं क्योंकि इनके अंत में माँ का प्रथम अक्षर है''– कनिष्क ने कहा। ''यह भी कहा गया है कि ईश्वर हर जगह मौजूद नहीं हो सकता इसलिए उसने माँ को बनाया''– सोहनी बोली। दक्ष ने कहा– ''माँ जग की आवाज है, माँ जीवन का मान, माँ वाणी है बुद्ध की, माँ

ही वेद पुराण।'' ''दिव्या ने भी सुर में सुर मिलाया– ''किसी ने ठीक कहा है...पूत कपूत हो सकता है पर माता कुमाता नहीं।'' मुकेश क्यों पीछे रहता– ''ईश्वर, अल्ला, राम, लिखा/ईसा रब सतनाम लिखा, जब शर्त लगी एक शब्द में लिखने की पूरी दुनिया, सबने सब लिख डाला लेकिन, मैने माँ का नाम लिखा।

सुदर्शन जी ने विराम लगाया– '' बस बच्चों, माँ की महिमा अपरम्पार है, उनके बारे में चर्चा कभी और करेंगे।'' ''जी आचार्य जी!''– सामूहिक स्वर बच्चों ने सहमति दी।

''अब यह बताओ, हम सबकी सारी गतिविधियाँ कहाँ पर, किसके ऊपर घटित होती है?'' सुदर्शन जी ने पूछा। ''हमारी सारी गतिविधियाँ, सारे कार्यकलाप धरती के ऊपर सम्पन्न होते हैं। हमारा घर चाहे कितना बड़ा हो, कारखाने कितने विस्तृत हों, विशाल हों, बस, ट्रक, रेलगाड़ियाँ कितनी वजनी और लंबी हों...सब धरती के शरीर पर चलते हैं''– कुश ने बताया। ''कभी सोचा है तुमने, वह सदियों से करोड़ों लोगों का अरबों टन बोझ अपने सिर पर उठाती रही है मगर चूं तक नहीं करती'' – सुदर्शन जी ने स्पष्ट किया। ''जी आचार्य जी! इसीलिए उसे मातृभूमि कहा जाता है जिसके उपकार माँ के समान अनंत होते हैं– ''भव्या ने स्वीकारा।

''हमारी भारत माता कौन है आचार्य जी?''– मुकेश ने उत्सुकता प्रकट की। ''जन्मभूमि याने मातृभूमि को ही भारत माता का सम्मान दिया जाता है– ''सुदर्शन जी ने बताया। ''हाँ आचार्य जी इसकी महिमा पर एक गीत भी बना है– ''जननी जन्मभूमि स्वर्ग से महान है....'' अर्थात् ये दोनों बहुत महान, अतुलनीय है''– आदर बोला। ''निःसंदेह इन दोनों का पद इतना बड़ा है कि इनके ऋण हम आयुपर्यंत नहीं उतार सकते, मात्र कोशिश कर सकते हैं इसलिए दोनों का अपमान भूलकर भी नहीं करना चाहिए''– सुदर्शन जी ने समझाया।

''आचार्य जी! इसी श्रेणी में एक और व्यक्तित्व है जिसके कर्ज हम कभी नहीं उतार सकते''– रजत बोला। ''कौन?''–सुदर्शन जी ने पूछ लिया। ''आप याने आचार्य जी, हमारे शिक्षक, गुरू! इसका अर्थ यह हुआ कि माँ, मातृभूमि और गुरु हमारे जीवन की आधारशिला होते हैं जिसके कर्ज हम मरते दम तक नहीं उतार सकते''– रजत ने बताया। अपनी स्वयं की प्रशंसा सुनकर सुदर्शन जी सकुचाते हुए मुस्कुरा दिए।

''आचार्य जी! हमने अपनी माँ को देखा है, गुरुजनों को देखा है पर...भारत माता को नहीं देखा। कैसा होगा उनका साक्षात् स्वरूप?'' कहते हुए विवेक ठहर गया। ''क्योंकि माँ और गुरुजी एक व्यक्ति विशेष हैं जिनका सामना होता रहता है लेकिन भारत माता एक भाव है, विचार है जो सर्वत्र व्याप्त है। समूचे देश की भारत माता एक है इसलिए उसका स्वरूप भी भव्य होना चाहिए''– सुदर्शन जी ने समझाने की चेष्टा की।

''आचार्य जी! हम भारत माता का स्वरूप जानने को उत्सुक हैं''– नकुल ने बात आगे बढ़ाई।

''आचार्य जी! भारत माता कहाँ रहती होगी, उनका स्थायी निवास कहाँ होगा?'' प्रमोद ने सुर में सुर मिलाया। ''अभी आचार्य जी ने बताया न कि भारत माता सर्वत्र व्याप्त है समूचा देश उनका आवास है''– रजत बोला। ''भारत मूलतः गाँवों में बसता है, हमारी अस्सी प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में रहती है इसलिए वे भी वहीं रहती होगीं, वैसे अब जनसंख्या का पलायन शहरों की तरफ तेजी से हो रहा है''– आकांक्षा ने कहा।

''वे सर्वत्र व्याप्त हैं लेकिन उसका कोई चित्र विशेष नहीं है, आकार-प्रकार नहीं है इसलिए उसे अपनी कल्पना की उड़ान से उकेरना होगा– ''सुदर्शन जी ने कहा। ''और सबकी कल्पनाएं भिन्न होगीं''– शिवम् ने जोड़ा।

''देखो बच्चो! तुम्हारी इस वार्तालाप से मस्तिष्क में एक योजना कुलबुला रही है...क्यों न भारत माता के स्वरूप को चित्र के माध्यम से तुम्हारे अंदर से निकाला जाए। मेरा आशय है, एक प्रतियोगिता आयोजित की जाए। जिसमें सर्वश्रेष्ठ की कृति को विद्यालय में स्थान दिया जाए। मैं इस बारे में प्राचार्य जी से चर्चा कर उन्हें राजी कर लूंगा''– सुदर्शन जी ने प्रोत्साहित करते हुए कहा। ''आचार्य जी! इस प्रतियोगिता को हमारी कक्षा तक समिति न रखकर विद्यालय स्तर पर कराया जाए तो कड़ी प्रतिस्पर्द्धा होगी और श्रेष्ठ परिणाम मिल सकेंगे''– विपुल ने सुझाव दिया जिसे सुदर्शन जी ने सहर्ष स्वीकार लिया।

प्रतियोगिता की विधिवत घोषणा अगले दिन प्रार्थना सभा में की गई। संयोजक आचार्य जी ने बताया– ''विद्यालय प्रांगण में भारत माता की प्रतिकृति लगाने हेतु चित्रकला प्रतियोगिता आयोजित की जा रही है। एक बड़े कैनवास पर भारत माता का चित्र बनाना होगा तथा आवश्यकतानुसार रंग भरकर एक शीर्षक भी देना होगा। प्रतियोगिता आज से दस दिन बाद आयोजित की जाएगी।

संयोजक आचार्य जी की इस उद्घोषणा से विद्यार्थियों में पर्याप्त उत्साह का संचार हो गया। अपने स्तर पर विद्यार्थीगण तैयारी में जुट गए। कोई पुस्तकालय में विभिन्न पुस्तकें खंगालने लगा, कोई अपने गुरुजी से पूछने लगा। कोई अपने माँ-पिता, दादा-दाजी से मार्गदर्शन प्राप्त करने लगा।

निर्धारित दिन प्रतियोगिता सम्पन्न हुई। सैकड़ों प्रविष्टियों को निर्धारित समय में जांचना चुनौतिपूर्ण कार्य था। निर्णायक मंडल ने चार प्रविष्टियों का चयन कर प्राचार्य जी के समक्ष प्रस्तुत कर निवेदन किया कि सर्वश्रेष्ठ का चुनाव वे करें।

अगले दिन संयोजक आचार्य जी ने प्रार्थना सभा के पहले प्राचार्य महोदय को याद दिला दिया कि आज परिणाम घोषित करने हैं।

प्रार्थना सभा की समाप्ति पर सब विद्यार्थियों को सभागृह में इकट्ठा किया गया। प्राचार्य के निर्देश पर वहाँ एक सफेद पर्दा लगाया गया जिस पर प्रोजेक्ट के माध्यम से चित्र दिखाए जाने थे।

प्राचार्य ने बताया– ''देखो बच्चों निर्णायक मंडल ने चुनकर ये चार प्रविष्ठियां हमें दी हैं। जिन्हें हम बड़े पर्दे पर प्रदर्शित कर रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि सर्वश्रेष्ठ का चयन तुम लोग करो इसलिए ध्यान से देखो।''

पहला चित्र बड़े पर्दे पर उभरा, शीर्षक था आधुनिक भारत माता। पृष्ठ भूमि में निर्मित राष्ट्रध्वज के समक्ष एक महिला खड़ी है जिसके केश संवरे और वेशभूषा शालीन है। आँखों में चाँदी सी चमक, होटों पर खनकती हँसी और माथे पर स्वर्णकिरीट। चार हाथों में क्रमशः मोबाइल, तलवार, शंख और कलम हैं।

दूसरे चित्र का शीर्षक था–दुखियारी भारत माता। पृष्ठ भूमि में लहलहाते खेत के सामने एक अधेड़ महिला खड़ी है जिसकी वेशभूषा मलिन, वस्त्र फटे, बाल बिखरे। झुर्रियों से भरे चेहरे पर चिंता की लकीरें। हाथों में त्रिशूल, पुस्तक, गेहूँ की बाली और कलम।

तीसरे चित्र का शीर्षक था आज की भारत माता। पृष्ठ भूमि में लहराते समुद्र के सम्मुख एक प्रौढ़ महिला खड़ी है जिसक मुखमंडल पर मातृत्व के भाव, होठों पर फीकी मुस्कान है। चारों हाथों में क्रमशः भगवद्गीता, कृपाण, राष्ट्रध्वज तथा आशीर्वाद की मुद्रा में उठा हाथ।

चौथे चित्र का शीर्षक था– भारत माता ग्रामवासिनी। पृष्ठभूमि में लहलहाती खेत की फसल के समक्ष ग्रामीण वेशभूषा में एक सुदर्शना युवती शेर पर सवार है, उसके हाथों में हल, कलम, मोबाइल और झाडू है।''

चारों चित्रों को अलग अलग दिखाते हुए फिर एक साथ सबको कुछ छोटे रूप में प्रदर्शित किया गया। प्राचार्य जी की आवाज गूंजी– ''अब बताओ बच्चो! इनमें

सर्वश्रेष्ठ चित्र कौन सा लगा?''

कुछ पल के लिए चुप्पी व्याप्त हो गई मानो विद्यार्थीगण गंभीरतापूर्वक चयन कर रहे हों फिर अधिकांश विद्यार्थी एक स्वर में पुकार उठे– ''चौथा, चौथा, चौथा''। प्राचार्य मुस्कुराए– ''ठीक है मेरी पसंद भी तुम लोगों से मिलती है।'' सुधीर ने झिझकते हुए पूछ लिया''– आचार्य जी! एक हाथ में झाड़ू किसलिए? झाड़ू सफाई का पर्याय है। तुम्हें पता होगा पिछले कुछ समय से हमारे समूचे देश में स्वच्छता अभियान चल रहा है। स्वच्छता ईश्वर का दूसरा नाम और उनका आवास है।'' ''और आचार्य जी एक हाथ में हल किसलिए?'' प्रमिला ने कहना चाहा तो प्राचार्य ने टोक दिया– ''हल हमारी कृषि का प्रतीक है, हमारा देश कृषिप्रधान है।''

अब विद्यार्थियों में उत्सुकता जाग्रत हुई विजेता का नाम जानने की। चित्र पर किसी का नाम अंकित नहीं था क्योंकि मना किया गया था ताकि निष्पक्ष जांच हो सके। मोहिनी ने जानना चाहा– ''आचार्य जी! यह चित्र किसने बनाया? प्राचार्य मुस्कुराते बोले– ''यह कल बताया जाएगा और बनाने वाले को भारत माता के हाथों पुरस्कृत किया जाएगा।'' ''भारत माता के हाथों...सारे विद्यार्थीगण आपस में फुसफुसाने हुए जिज्ञासा प्रकट करने लगे।

थोड़ी देर बाद प्राचार्य ने संयोजक आचार्य जी! को संदेश भेजा कि वे विजेता विद्यार्थी को लेकर उनके कक्ष में आएं। थोड़ी देर में संयोजक एक विद्यार्थी को लेकर आए जिसने बड़ी शालीनता से प्राचार्य महोदय के चरण स्पर्श किए। संयोजक ने बताया– ''यह चित्र कुश ने बनाया है।'' प्राचार्य ने प्रशंसा करते हुए कहा– ''बधाई हो, चित्र की परिकल्पना किससे मिली?'' ''मेरी माँ से''– सकुचाते हुए कुश ने बताया।

संयोजक ने बताया– ''सर यह विद्यार्थी गाँव से यहाँ पढ़ने आया है। ग्रामीण पृष्ठभूमि के कारण इसकी आदतें, संस्कार पुरातन हैं मगर अनुकरणीय। यह सब अध्यापकों के चरण स्पर्श करता है, भोजन से पहले मंत्र बोलता है, सबके साथ शालीनता से पेश आता है। घर जाते समय पूरे विद्यालय में चक्कर लगाकर देखता है कि कही कोई पंखा या लाइट तो नहीं जल रही, कहीं पानी का कोई नल तो खुला हुआ नहीं है।'' ''और पढाई में कैसा है यह?''– प्राचार्य ने जानना चाहा। ''सबसे आगे''– संयोजक ने बताया।

प्राचार्य ने कुश से कहा– ''कल सुबह पुरस्कार वितरण होगा, अपनी माँ से कहना वे भारत माता के वेश में आकर तुम्हें पुरस्कार प्रदान करें''– प्राचार्य ने कहा। कुश दुविधा में पड़ गया। कुछ बोलता इसके पूर्व ही प्राचार्य कुर्सी से उठकर बाहर निकल गए।

पुरस्कार वितरण के लिए सारी तैयारी थी। निर्धारित समय पर कुश को भी मंच पर बुला लिया गया। संयोजक आचार्य जी बार बार कुश से पूछ रहे थे ''उसकी माँ अब तक क्यों नहीं आई?'' कुश कैसे बताता कि वे नहीं आने वाली, उन्हें लज्जा आती है सबके सामने आने में, गाँव की हैं न।

कोई चारा न देख कार्यक्रम स्थगित किया जाता तभी सबने देखा द्रुतगति से चलते भारत माता मंच पर पहुंच गई। विद्यार्थियों ने करतलध्वनि कर उनका हार्दिक अभिनंदन किया। प्राचार्य ने उनके हाथों कुश को पुरस्कार प्रदान करवाया। भारतमाता को देखकर कुश हतप्रभ रह गया।

भारत माता का आभार मानते हुए प्राचार्य जी ने अनुरोध किया–''आप चाय पीकर जाइएगा। ''नहीं मुझे कुछ जल्दी है, चाय के लिए फिर कभी आ जाऊँगी''– कहते हुए भारत माता प्रस्थान कर गई। प्राचार्य ने पूछा– ''तुम्हारी माँ क्या इतनी ज्यादा संकोची हैं कि चाय के लिए भी नहीं रुक सकी?'' कुश ने बताया– ''नहीं आचार्य जी! वे मेरी माँ नहीं थी।'' –फिर...ऐसा कैसे हो सकता है? प्राचार्य महोदय स्तब्ध रह गए।

फिर वह पुरस्कार प्रदान करने वाली महिला कौन थी? किसी के पास कोई उत्तर नहीं था। सब यही मानने को विवश हो रहे थे जो प्राचार्य महोदय के मुँह से निकल गया– ''सम्भवतः वे सचमुच की भारत माता थीं।''

– इन्दौर (म.प्र.)

छपाक छैया ताल- तलैया

कहानी : डॉ. वेदमित्र शुक्ल

वरुण के मन-मस्तिष्क में गाँव की छबि उसके छुटपन की स्मृतियों के साथ एकाकार है। असल में उसके छुटपन के दिन गाँव में ही बीते। दादी-बाबा सहित गाँव में माँ के साथ रहना होता था। बाबाजी से उसका कुछ अधिक ही लगाव रहा। उनसे यों घुला-मिला रहता कि प्रायः उनके पास ही सोता, गोद में बैठकर खाना खाता और सुबह सबेरे सोकर उठता तो 'बाबा-बाबा' कहते हुए उन्हें पुकारता। उनसे जुड़ाव इस तरह से कि वरूण से घर के किसी बड़े सदस्य को यदि खिलवाड़ करने की सूझती। तो वह उसके कहते- ''वो बाबा जी जा रहे हैं... घुम्मी करने।'' और यह सुनना भर होता कि वह बाबा की ओर बकैयाँ-बकैयाँ यानी घुटनों के बल ही सही पर दौड़ पड़ता। बाबा तो उसे इस तरह से लाड़ करते कि उसके साथ खेलते- खेलते वे भी बच्चा ही बन जाते। चूँकि गाँव भर में बाबा को सभी एक अक्खड़ स्वभाव वाला व्यक्ति मानते थे इसलिए लोग जब वरुण के साथ उनको खेलते, हँसते और मुस्कुराते हुए देखते तो उनका एक अलग ही रूप देखने को पाते। लोग एक दूसरे को कभी-कभी संकेत से मुस्कुराकर कहते, ''जरा देखो तो, ये होता है बाबा-पोते का प्यार।''

वरुण थोड़ा चलने-फिरने लायक हुआ तो गाँव में खुला घूमता। शायद आजकल की तरह गाँव में और ग्रामीणों के मन में बच्चों को लेकर कोई असुरक्षा का भाव नहीं होता था। जैसा इस समय आये दिन समाचार पत्रों आदि के माध्यम से बच्चों के

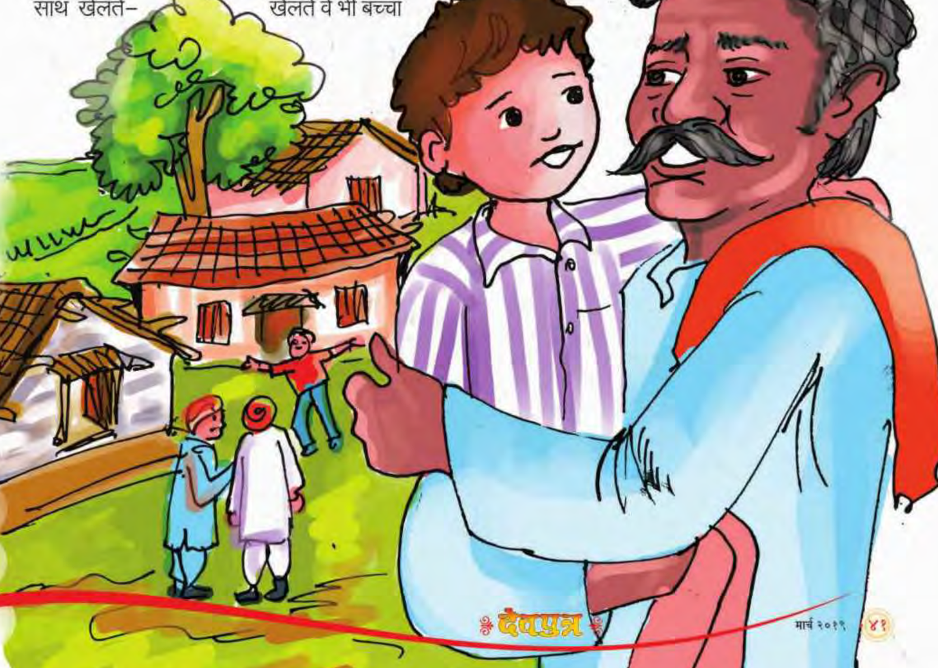

साथ घट रही घटनाएं देखने–सुनने को मिल जाती हैं। टहलते–घूमते किसी के भी घर में घुस जाता। तो चाहे बड़की दादी हो या छोटकी बुआ, सब अपने ही गोद के बच्चे जैसा लाड़–प्यार देतीं। लाड़–दुलार करने, खिलाने–कुदाने आदि के बाद स्वयं ही घर छोड़ जाती। वरुण के साथ प्रायः ही ऐसा होता। क्योंकि जब वह सोकर उठता तो बाबा की गोद में जाने की जिद करता। वे अगर घर पर नहीं होते तो थोड़ी देर बाद उनकी खोज शुरू कर देता। घर के बड़े से आँगन में एक छोर से दूसरे छोर तक, और कमरों आदि में ढूंढता फिरता। मौका पाते ही ड्योढ़ी लांघ के जाता। वहीं रिश्ते में अतिमधुर संबंध रखने वाली महिलाएं मुँह धुलवाती, कलेवा करवाती और फिर, घर छोड़ जाती। सच में, ऐसे पारस्परिक आत्मीय संबंध तो शहरी आपाधापी से दूर, सादगी से भरपूर गाँव के परिवेश में ही संभव हो सकते थे।

बड़ा होते–होते उसने बाबा जी की खोज पूरी करनी शुरु कर दी थी। संयोग से बाबा प्रतिदिन ही या जब भी वह उन्हें खोज पाता तो वो अपने खेत से लगे किसी तालाब के किनारे बैठे मिल जाते। उनके माथे पर चंदन का लेप होता। जो सूखने के बाद बहुत हद तक झर चुका होता था। पर, वे चंदन सा महकते रहते। सफेद धोती के साथ महीन कपड़े का कुर्ता पहने, और कंधे पर एक गमछा जो कि कभी–कभी गले में लिपटा होता ऐसी छबि वाले उसके बाबा। सुबह वे वरुण से कितना पहले जग जाते और फिर, प्रातःकालीन दैनिक कार्यों को निपटा के घर से निकल जाते? इसका आकलन कर पाना तो वरुण के लिए मुश्किल ही था।

यों तो गाँव में और उसके आस–पास अनेक ताल–तलैया रहे। पर, जिन तालाबों के आस–पास उसने बाबा के साथ अपना बचपन जिया। उन्हें भला वह कैसे भूल सकता था? गाँव से ही सटे हुए वे छोटे–छोटे ताल जैसे विलेतिया वाला ताल, अमोलुदा ताल, रामचन्दर की गढई आदि–आदि। तब उन तालों का अतिक्रमण नहीं हुआ था। आज भी गाँव से थोड़ी दूर स्थित छोटा ककरहावा, बड़ा ककरहावा, सगरा, कुम्हरा ताल जैसे बड़े–बड़े ताल हैं।

सुबह बाबा जी घर से निकलते अपने खेतपात देखते, फसलों का जायजा लेते और इन सबके बाद किसी एक ताल के किनारे बैठकर प्रातःकालीन मनोहारी दृश्यों को निहारते। अब, वरुण भी तो उनको ढूंढने में सफल होने ही लगा था। सो अक्सर सुबह–सुबह उनके साथ वहीं ताल के किनारे ही होता। देर तक गाँव के ही कुछ साथी बालकों के साथ खेलता। ताल में ही या उसके आस–पास उगे हुए तरह–तरह के पेड़–पौधों को निहारता। वहीं ताल में पिछली शाम को ही खिल चुके सफेद रंग के कुमुदिनी और सुबह–सबेरे खिले लाल कमल के फूल तो सब बच्चों को क्या खूब लुभाते। बचपन में तो वरुण को इन दोनों फूलों में सफेद और लाल रंग के

अलावा कोई दूसरा फर्क ही नहीं समझ आता था। पर, बाबा उसे बताते कि कैसे कुमुदिनी चंद्रमा और कमल सूरज के साथ खिलते है? कुछ तैराक बच्चे गोते लगाते और दूसरे छोटे बच्चों के लिए सुन्दर फूल उनके नाल सहित तोड़ के लाते। सब उन्हें पाकर खुशी से फूले न समाते। प्रायः वे फूल वरुण के दिनभर के खेलकूद में साथ ही होते।

वहाँ कलरव करते अनेक तरह के पक्षियों का भी जमावड़ा होता। जिनमें लाल गले वाले सारस भी होते थे। उनको गाँव में सभी द्वारा कड़ाकुल नाम से पुकारा जाता। असल में वे साइबेरिया देश के प्रवासी पक्षी होते थे। जो जोड़ों में समूह के समूह आते। इन्हें एक विशेष विधि से पैरों को उठा के चलते-फिरते, उड़ते और साथ ही, विशेष

प्रकार से कलरव करते हुए देखना वरुण को बहुत ही भाता। गाँव में लोग नहाने के लिए सगरा ताल के पानी को निर्मल और शुद्ध मानते थे। कभी-कभी तो वह भी ताल में ही नहाता और 'छपाक छैया ताल तलैया' वाला गीत गाता। कुल मिलाकर उन तालों का प्राकृतिक स्वरूप इतना मनोहारी होता कि वरुण उसमें खो-सा जाता।

ताल-तलैया सुरम्य और छटाशाली तो होते ही थे। बल्कि, अनेक प्रकार से बहुत ही उपयोगी भी होते थे। कितनी ही बार वरुण ने गाँव के लोगों को ताल के ही पानी से खेतों की सिंचाई करते हुए देखा था।

इनकी उपयोगिता तो असल में उसे उस दिन समझ में आई, जब गाँव में एक ऐसी घटना घटी जिसे वह कभी नहीं भूल पाया। उसे याद है कि जब वह थोड़ा बड़ा हो चुका था। तब, एक दिन गर्मी के महीने में ककरहावा ताल जो थोड़ा छिछला था और जिसे उसके परिवार का ही ताल माना जाता था। वहाँ लोग आपस में बुरी तरह से झगड़ रहे थे। हाथापाई तक हो जाने के आसार थे। वास्तव में उसके गाँव में, ताल में पानी के कम होने या सूखने पर उसकी मिट्टी को निकाल कर खेतों में डालने की परम्परा रही। जिससे कि जमीन और अधिक उपजाऊ बनती तथा खेती में पैदावार बढ़ जाती, पर इस बार किन्ही कारणों से उसके परिवार के सदस्यों ने ताल से मिट्टी निकालने से गाँव वालों को मना कर दिया था। इसी बात पर दोनों पक्षों में जमकर कहा-सुनी हो रही थी। कल तक जो आपस में एक दूसरे को सुबह शाम राम-राम किया करते थे। वे ही एक दूसरे से झगड़े जा रहे थे। यह झगड़ा तो वरुण को बिलकुल ही रास नहीं आ रहा था, पर, बड़ों के ऐसे झगड़ों में वरुण जैसे बच्चे भी भला क्या कर सकते थे?, बस दर्शक बने रहने के?

इसी बीच एकाएक उसके बाबा जी आये। कुछ समय तक लोगों को देखने-सुनते रहे। दोनों पक्षों की बात को ठीक से समझने के बाद परिवार के ही सदस्यों को जिनमें वरुण के पिताजी भी सम्मिलित थे बुरी तरह से डाँटा। वरुण के पिता जी को तो पीटने ही दौड़ पड़े और गाँव वालों से कहा कि जब तक तालाब से बालू न निकलने लगे वहाँ

तक सारी मिट्टी खोद करके अपने–अपने खेतों में पाट लें। बाबाजी की इस बात को कुछ ने आदेश तो कुछ ने सही सुझाव मानकर झगड़े को वहीं खत्म किया और तालाब गहरा खुद गया। यहाँ तक खुद गया कि उसमें पानी निकल आया। पर, वरुण यह नहीं समझ पाया कि बाबाजी ने गाँव वालों का पक्ष लेकर घर के ही लोगों को क्यों डाँटा–फटकारा? आखिरकार बहुत सारी मिट्टी तालाब से निकल गयी थी। तालाब गहरा हो गया था। इस सब पर बाबा जी के कड़े अनुशासन के कारण घर में कोई कुछ नहीं बोला। लेकिन यह घटना वरुण के बालमन को कचोटती रही।

वरुण पढ़ने–लिखने लायक जब बड़ा हुआ तो वह अपने जनपद मुख्यालय के कस्बे में माँ–पिता जी के साथ चला आया। क्योंकि उसके पिताजी यहीं रहकर शिक्षण कार्य करते थे, इसलिए उसकी पढ़ाई–लिखाई भी यहीं से एक विद्यालय में आरम्भ हो चुकी थी। बाबा जी कम से कम महीने में एकाध बार शहर में उन सबका हाल–चाल लेने आ जाया करते थे। अब तक बाबाजी से मिले हुए लाड़–प्यार के कारण वरुण उनसे पहले जैसा घुला–मिला हुआ तो रहता ही था। साथ ही साथ, बच्चों वाली अपनी समझ के अनुसार ही संसार भर की ढेर सारी बातें भी करने लगा था। एक दिन कोई बात चली और उस दौरान उसे तालाब पर हुए झगड़े की बात याद आ गई। तब उसने बाबाजी से पूछ ही लिया कि उन्होंने घर वालों को तालाब के मामले में क्यों डाँटा था? इस सवाल को सुनकर बाबा जी समझ गये कि उस झगड़े से वरुण के बालमन को अवश्य ही ठेस पहुँची है। पर तालाब गहरा करवाने के पीछे के कारण को जो वरुण को शायद उस समय समझाना बाबाजी के लिए तनिक कठिन होता। अब थोड़ा बड़ा होने पर समझाया जा सकता था। सो बाबा ने बड़े स्नेह से उसे पास बैठा कर बताया।

''बेटा! उस दिन तो लड़ाई को शांत करवाने के लिए गुस्सा दिखाना पड़ा था। पर जो बात मैंने सबको कही थी वह अनुचित नहीं थी। सबके भले की ही थी। जानते हो...जब, जोर की बारिश होती है तब ताल–तलैया में बारिश का पानी इकट्ठा हो जाता है। तालाब जितना अधिक गहरा होगा, उतना ही अधिक पानी उसमें इकट्ठा होता है। इससे बालू निकलने तक खुद जाने से बरसात का बहुत सारा पानी इनमें सरलता से इकट्ठा होने के साथ–साथ टिका भी रह जाता है। वही पानी धीरे–धीरे धरती के अन्दर तक रिस–रिस के भी पहुँचता है। जिससे जब बारिश के दिन नहीं होते हैं, या फिर गर्मी के दिन होते हैं, तब कुँए और तालाब सूखते नहीं हैं। तरह–तरह के जीव जन्तु, पशु–पक्षियों सहित हम सबको ही उन दिनों में पानी की कमी अनुभव नहीं होती। सबको पीने को पर्याप्त पानी मिलता है। और हाँ, तुमने तो पढ़ा ही होगा कि हम सबके लिए जल कितना अनिवार्य है? कहते हैं न, 'जल ही जीवन है।'

उस समय तो वरुण ने बाबा जी की बात गौर से सुनी और बाबा जी द्वारा घर के सदस्यों को डांटने का कारण भी समझ गया। पर बड़े–बूढ़ों की बातों में जो रस होता है, वह सूखता कहाँ है? वह तो अनंत समय के लिए होता है। जीवन में जब कभी मन कठिनाई का अनुभव करता है, तब सही मार्ग पर चलने के लिए उनकी बातें ही बल दे रही होती हैं। आज जब देश के लगभग २५ प्रतिशत भाग में सूखा पड़ा हुआ होता है, पानी के लिए ही अगले विश्वयुद्ध के लड़े जाने की संभावना जतायी जा रही होती है, वर्षा जल–संचयन और उसके प्रबंधन आदि को लेकर सरकारी स्तर पर अनेक प्रकार से जागरूकता अभियान चलाए जा रहे होते हैं, तब ऐसे समय में बाबा जी द्वारा उन ताल तलैया के संबंध में कहीं गई बातें और उनके प्रति उनका वह अनुराग वरुण को सोये से अचानक जगा देता है। वरुण को ककरहावा, सगरा और कुम्हरा जैसे गहरे तालों की और उनके रखरखाव के लिए सोचने–समझने वाले अपने बाबा जी की बहुत याद आती है। एक पल के लिए उसके मन में आता है कि वापिस गाँव चला जाए, और प्रकृति के साथ कैसे हिलमिल के जिया जाता है, जाकर सीखे।

– नई दिल्ली

माटी का मोल

कहानी : सौ. पद्मा चौगांवकर

निंदाई–गुड़ाई से जमीन एक सी करो। बीज बोओ। फिर देखते रहो आसमान की ओर, पानी के लिए। बादलों की मर्जी, पानी बरसाते हैं या नहीं।

बीजों में अंकुर निकलें, फिर पौधे बढ़ जाय तो, खर पतवार निकालो, और बड़े हो जायें तो उनकी रखवाली करो, जानवर पंछी भगाओ। जैसे तैसे फसल पक जाय, उसे काटने, उठाने, रखने में पसीना बहाओ, सारा समय खेत मिट्टी और फसलों के साथ जूझते रहो। अंत में हाथ क्या लगता है?... यह अपने अपने भाग्य की बात है।

दीना खेत की मेढ़ पर बैठा सोच रहा कि देखा बाबा आ रहे हैं... इन्हे पता नहीं इस उम्र में भी सारा समय खेत ही खेत दिखाई देता है। और दद्दा भी जब देखो मुझे खेत में घसीटते रहते हैं। मेरे सारे सपने सभी मिट्टी में दबकर रह जाते हैं।

मैं अधिक कुछ तो चाहता नहीं...बस पास के कस्बे में जाकर कोई धंधा या नौकरी करने की बात करता हूँ तो बाबा वही बात लेकर बैठ जाते हैं– ''देख दीना! खेती तो बस परिश्रम मांगती है और कुछ नहीं। माँ है वो, अपनी, बस देती ही देती है।''

दीना दद्दा की नजर बचाकर मेढ़ से उतरा, और खलिहान होता हुआ, गाँव बस्ती से बाहर आ गया सीधा बस अड्डे पर।

अड्डे पर आखरी बस आकर रुकी। ''अरे, बस से ये कौन उतरा?''

लच्छेदार बाल, जीन्स पैन्ट, लाल टी शर्ट और गले में गहरे रंग का रूमाल।

बरसों बाद देखने पर भी, दीना ने लल्लन को झट पहचान लिया।

बाप तो दूसरों के खेतों में खटता है और इसके ठाठ देखो। उसने आवाज लगाई – ''अरे लल्लन!''

''कौन लल्लन भाई? मेरा नाम तो गुरु है।'' उसने पलटकर कहा।

''विद्यालय के भगोड़े लल्लन को पहचानने में मैं भूल नहीं कर सकता।''– दीनू की बात पर, लल्लन जोर से हँसा।

दीना और लल्लन गाँव के विद्यालय में साथ पढ़ते थे। दीना को पढ़ना अच्छा लगता था और लल्लन को विद्यालय से भाग जाना।

''हैलो दीनू उस्ताद! पढ़–पढ़ कर क्या कर लिया? मुझे देखो, बिना पढ़े ही ठाठ से रहता हूँ, जेबें नोटों से भरी रहती हैं किसी चीज की कमी नहीं।''

दीना अवाक् होकर सब देख–सुन रहा था।

लल्लन उसे चचा की चाय की गुमटी पर ले गया।

चाय पिलवाई–पान खिलाया पूछा– ''कितना पढ़ लिया?''

''आठवीं पास कर ली है'' – दीना ने कहा।

''बहुत हुआ, अब इस गाँव से निकल। मेरे साथ हो जा, मालामाल रहेगा।'' लल्लन ने उसकी पीठ पर एक धौल जमाया।

दीना कब से, खेती के जंजाल से निकलकर कुछ और करना चाहता था। यह मौका कैसे हाथ से जाने देता? उसका मन विद्रोही हो उठा। आज न बाबा से पूछना ना दद्दा से। उसने बिना सोचे–समझे लल्लन गुरु से हाथ मिला लिया।

लल्लन ने दीना की हथेली पर कुछ रुपए रख दिये।

''काम की पेशगी समझो। काम पूरी ईमानदारी से करना है, समझे? और आगे से मुझे गुरु ही कहना, पुराना नाम भूल जाओ।''

''पर क्या करना होगा? दीना ने पूछा।

''सब बताता हूँ, सुन लल्लन बोला–''अभी कुछ दिन गाँव में रहकर ही काम करना है, फिर तुझे शहर शहर ले जाऊँगा। जहाँ कम मेहनत में खूब कमाई है। सब काम सावधानी से करना होता है।

कल शाम को आखरी बस पर आना। हाथ में, ये ले ये लाल कपड़ा लिये रहना। बस से एक लड़का उतरेगा, उसका नाम हैं चार सौ छप्पन।''

''ये कैसा नाम है?''

''दीना, ये सोचना तेरा काम नहीं, वह तुझे कुछ सामान देगा, उसे कुछ दिन छिपाकर रखना तेरा काम है– बस''

''छुपाकर ?... फिर?''

''मौका लगते ही, मैं खुद आऊँगा और सामान ले जाऊँगा। सामान खोलकर देखना मत। ईमानदारी इस धंधे की पहली शर्त है।'' लल्लन की बातें उसे विचित्र और, रहस्यमयी लग रही थी। पर एक लालच भी उस पर हावी हो रहा था।

दूसरे दिन आखरी बस से चार सौ छप्पन आया, एक मैला–कुचैला भारी थैला, दीना को पकड़ाकर उसी बस में चला गया।

दीना क्या करता थैला लेकर, ठगा सा खड़ा रह गया। ... यह रहस्यमय झोला, इसका क्या करे। कहाँ छुपाए?

उधर चाय वाले काका उसकी ओर देखे जा रहे थे, यह बात दीना ने ताड़ ली थी, पर उसकी कोई चिंता किये बिना, उसने थैला बगल में दबा लिया... लल्लन गुरु का जादू चल

गया था उस पर।

अंधेरा घिरने लगा था, दीना बढ़ चला लुकमान के गोदाम की ओर। वहीं दीना रात पाली की चौकीदारी करता था। उसने सोच लिया झोला वहीं छुपाया जाए।

वहाँ किसान खड़ा था बोला–''अरे दीना! आज जल्दी आ गया? और ये झोला? क्या खाना लेकर आया है?''

दीना घबरा गया– ''नहीं–नहीं कपड़े हैं, इसमें सुबह यहीं से नदी निकल जाऊँगा, नहाने।''

दीना को आश्चर्य हुआ। कितने चालाकी से सच्चाई को नकार दिया। पहली बार उसे नाहक ही झूठ बोलने की पड़ गई थी। धंधे की पहली शर्त निभाने के लिए।

किसना गोदाम की चाबियाँ देकर चला गया। दीना ने इधर उधर देखा, गोदाम का ताला खोला और अनाज के बोरे के बीच, वह झोला उसने छुपा दिया। दरवाजे से सट कर बैठ गया। थकान के कारण झपकी लग गई। एक सपना देखा उसने एक बहुत बड़े मकड़ जाल में वह फंस गया है, जितना निकलने की कोशिश करता है, उलझता ही जाता है...घबराकर जाग उठा पसीने से नहाया हुआ।

सोचने लगा लल्लन ने जो सपना दिखाया है, शायद उसकी सच्चाई यही है।...ये धोखेबाजी का जाल... और उस झोले में क्या है? क्यों उसे खोलकर देखना मना है?

वह उठा ताला खोलकर झोला उठा लाया। उसमें रखी कोई चीज पैकेटों में बंद थी, फिर भी एक तेज गंध उसका भेद खोल रही थी।

...तो लल्लन गुरु मुझे अपराध की दुनिया में ले जाना चाहता है। नहीं चाहिए, मुझ ऐसी कमाई।

....लेकिन खतरे का खेल तो शुरु हो चुका है अब इस जाल से कैसे निकला जाय?

... उसे याद आया चाय वाले काका की, जिसने उसे अपराध की दुनिया में पहला पग रखते हुए देख लिया था।

दूसरे दिन सुबह ही दीना काका की गुमटी पर पहुँचा कुछ न छुपाते हुए काका को सारी बात साफ–साफ बता दी।

काका को पहले ही लल्लन पर शंका थी। वे जानते थे, लल्लन जैसे लोग गाँव के भोले –भाले लड़कों को शहर के सपने दिखाकर फांसते हैं, मेहनत से नहीं, गैर कानूनी तरीकों से, ढेर सारा पैसा कमाने की राह पर ले जाते हैं, वो झोला और वो पेशगी पैसा गवाह है।

दीना बोला– ''काका! इस बार मुझे बचा लो। मैं मेहनत का मोल समझ गया।'' उसकी आँखों में आंसू थे।

काका ने कहा– ''तुमने बेईमानी की कमाई का लालच छोड़ दिया, ये बहुत साहस की बात है। इस अपराध के दलदल में पाँव रखने से अच्छा है अपने खेत की माटी में सन जाओ।

ये झोला और पैसे यही छोड़ जाओ, मैं सब देख लूँगा। उस लल्लन को भी देख लूँगा।

दीना जैसे सारे तनाव और दबाव से मुक्त हो गया। खेत की ओर भागा। मेढ़ पर चढ़कर खड़ा हो गया, अपने खेत आज उसे कितने अच्छे लग रहे थे और हवा में झूमते नन्हें पौधे कितने प्यारे। जैसे उसे बुला रहे हों।

बाबा बावड़ी पर रहट से, खेत में करीने से बनी नालियों में पानी छोड़ रहे थे और दद्दा हटा रहे थे खरपतवार।

''दद्दा मैं भी आता हूँ'' – दीना ने पुकारा।

– गंजबासौदा (म.प्र.)

रंग भरो

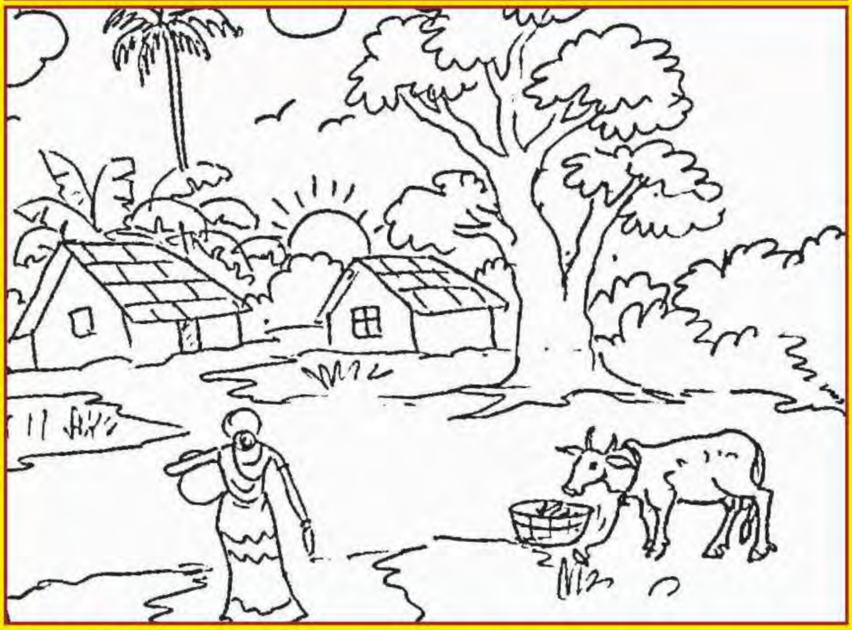

श्रद्धांजलि

बहुत खलेगा विनोद जी का चला जाना

लखनऊ के निवासी सुप्रसिद्ध बाल साहित्यकार डॉ. विनोदचन्द्र पाण्डेय 'विनोद' अनवरत साहित्य साधना करते हुए हमसे चिरविदा ले गए। अस्वस्थता कई दिनों से उन्हें घेरे थी इसी के चलते वे गतवर्ष देवपुत्र गौरव सम्मान प्राप्त करने इन्दौर भी न पधार सके थे और यह सम्मान उन्हें लखनऊ जाकर ही देना पड़ा। वर्षों से देवपुत्र ही नहीं बल्कि देश की लगभग समस्त हिन्दी बाल पत्रिकाओं में ससम्मान प्रकाशित होते रहे। प्रशासनिक सेवा में वरिष्ठ पद पर रहते हुए भी बाल सुलभ सरलता से ओतप्रोत मानस के धनी थे। आपकी अनेक कृतियाँ प्रकाशित हैं जो बाल साहित्य के लिए धरोहर रहेंगी। देवपुत्र परिवार आपके निधन पर शोकाकुल हो श्रद्धांजलि अर्पित करता है।